॥ ८१७ ॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस–रामकृष्णहरि

सुरत (गुजरात)

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा॥
जब जदुबंस कृष्न अवतारा। होइहि हरन महा महिभारा॥
हरि चरित्र मानस तुम्ह गावा। सुनि मैं नाथ अमिति सुख पावा॥

|| रामकथा ||
मानस–रामकृष्णहरि

मोरारिबापू

सुरत (गुजरात)
दिनांक : ०७-०२-२०१५ से १५-०२-२०१५
कथा-क्रमांक : ७७१

प्रकाशन :
दिसम्बर, २०१५

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

हिन्दी अनुवाद
प्रो. कमल महेता

राम–कथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क–सूत्र :
ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स
स्वर अेनिम्स

प्रेम–पियाला

सूर्यनगरी सुरत(गुजरात) में तापी नदी के तट पर दिनांक ७–२–२०१५ से १५–२–२०१५ दरमियान मोरारिबापू की रामकथा सम्पन्न हुई। सामान्यत: 'रामचरित मानस' की कोई भी दो चौपाई पसंद कर बापू की रामकथा कोई विषयविशेष में केन्द्रित होती है, लेकिन प्रस्तुत कथा में बापू ने प्रासादिक प्रेरणा से कथा के मुख्य विषय के रूप में यह तीन चौपाई पसंद की–

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा।।
जब जदुबंस कृष्न अवतारा। होइहि हरन महा महिभारा।।
हरि चरित्र मानस तुम्ह गावा। सुनि मैं नाथ अमिति सुख पावा।।

और यह रामकथा का नामकरण किया गया 'मानस–रामकृष्णहरि।' रामतत्त्व यानी सत्यतत्त्व; कृष्णतत्त्व यानी प्रेमतत्त्व और शिवतत्त्व या हरितत्त्व यानी करुणातत्त्व, ऐसा निवेदन करते हुए बापू ने कहा कि रामकथा यानी सत्य की कथा; कृष्णकथा यानी प्रेम की कथा और हरिकथा यानी करुणा की कथा।

कथा अंतर्गत बापू ने 'राम', 'कृष्ण' और 'हरि' विषयक विशिष्ट दर्शन व्यक्त किया। राम ब्रह्मरूप है, परमार्थरूप है, अबिगत है, अलख है, अनादि है और अनुपम है, इनकी विशद चर्चा करते हुए मुख्य चौपाई के परिप्रेक्ष्य में रामतत्त्व के विधविध परिमाण की बापू ने उद्घाटित किए।

कृष्णचरित्र का परिचय भी बापू ने निजी ढ़ंग से दिया और कृष्ण की रामलीला, कृष्ण की रासलीला एवम् कृष्ण की राजलीला प्रति निर्देश किया। कृष्ण ने बलराम के साथ की हुई लीला को 'रामलीला' से निर्दिष्ट करते हुए बापू ने कहा कि बलराम साथ हुई वह निर्दोष बाललीला थी। तो कृष्ण की अद्‌भुत रासलीला का महिमागान बापू ने इस शब्दों में किया कि कृष्ण की यह प्रेमलीला है, भक्ति की लीला है। आज तक यह राससलीला ने हमारे अंत:करण को पवित्र रखने का पुण्यकर्म किया है। कृष्ण की रासलीला यह प्रेम की पराकाष्ठा है। और 'महाभारत' के कई प्रसंगो के आधार पर व्यासपीठ से कृष्ण की राजलीला को उजागर किया गया।

रामकथा अंतर्गत बापू ने'हरि' की विभिन्न अर्थछाया भी प्रकट की। बापू का निवेदन रहा कि तुलसी के तात्त्विक अर्थ में व्यापक्ता का नाम 'हरि' है। जगत में जो अनंत है वह 'हरि' है और 'हरि' शब्द का तीसरा अर्थ है कि जो अवतार ले उनको हरि कहा जाता है।

'मानस–रामकृष्णहरि' रामकथा के माध्यम से मोरारिबापू की व्यासपीठ से राम, कृष्ण और हरि विषयक तात्त्विक विचार–विमर्श हुआ।

– नीतिन वडगामा

मानस–रामकृष्णहरि
|| १ ||

गुरुवंदना मानी विवेक की वंदना, विश्वास की वंदना, गुणातीत श्रद्धा की वंदना

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा।।
जब जदुबंस कृष्न अवतारा। होइहि हरन महा महिभारा।।
हरि चरित्र मानस तुम्ह गावा। सुनि मैं नाथ अमिति सुख पावा।।

बाप! भगवत्‌कृपा से सुरत में चाहे लम्बे समय के बाद रामकथा गाने का अवसर मिला है पर इस पावन पर्व पर जिनके वचनामृत का श्रवण किया ऐसे स्वामीश्री माधवप्रियदासजी महाराज, पूज्य भाईश्री, अन्य सभी संत-महात्मागण, सबको व्यासपीठ से मेरे प्रणाम। विधविध क्षेत्र के आदरणीय महानुभव, कथा मंडप में सन्मुख बैठकर और विज्ञान के सदुपयोग से कथा श्रवण करते समस्त श्रोता भाईयों-बहनों और इस कथा में निमित्त हुआ गोविंदभाई सह बृहद् धोलकिया परिवार और अन्य सबको व्यासपीठ से मेरा प्रणाम।

बाप! बारह वर्ष के बाद सुरत में रामकथा का योग हुआ। सभी जगह लंबे समय के बाद रामकथा का योग बनता है। बड़ौदा में चौदह वर्ष के बाद कथा हुई। हम सबके सद्‌भाग्य से तापी तट पर स्थित सूर्यनगरी में रामकथा का आरंभ हो रहा है तब हमें सभी पूजनीय महापुरुषों का सान्निध्य प्राप्त हुआ है। उनके आशीर्वचन मिले इसका भी विशेष आनंद है।

इस बार सुरत की रामकथा में मुझे किस विषय पर बोलना है, यह प्रश्न था। 'रामायण' में से किसे केन्द्र में रखें? कल रात मेरे मन में निर्णय हुआ। रामकथा में दो पंक्तियां लेकर कथा के प्रसंग तो जरूर कहे जायेंगे। यह रसमय है; यह सहज, प्रासादिक प्रवाह चलता रहा है। इस कथा में तीन पंक्तियों लूंगा। रात को प्रासादिक प्रेरणा से मैंने तय किया; मेरे पास कई विषयों की जिज्ञासा थी। 'मानस-सूर्यवंश' पर कहूं। इसे सूर्यनगरी कहते हैं। कहा जाता है कि कुंआरी भूमि पर अग्निसंस्कार हुआ था अत: 'मानस-कर्ण' पर कहूं। सुरत में काफी दाता है, अत: 'कर्ण' शब्द उपयुक्त रहेगा। मुझे भी ठीक लगा। 'मानस-कर्ण' की कथा ठाकोरजी की कृपा होगी तब कह सकूंगा। हिन्दी में करूंगा।

तो बाप, बारह वर्ष के बाद सुरत आने का आनंद है। आपकी कई जिज्ञासाएं इस नगरी के बिलकुल अनुरूप थी। मुझे लगा, तीन पंक्तियां लूं। इस कथा को नाम देता हूं, 'मानस-रामकृष्णहरि।' वारकरी संप्रदाय का यह मंत्र है, रामकृष्ण हरि। महामुनि विनोबाजी भी इस मंत्र को बहुत ही प्यार करते थे। अंत में महापुरुष संक्षेप में जाते हैं। अत: विनोबाजी की रटना 'रामहरि' 'रामहरि' हुई। अत: सुरत की कथा का विषय, केन्द्रीय विचार 'मानस-रामकृष्णहरि' रहेगा। आप इनके भाष्य करते रहियेगा। जो भी अर्थ निकले! परंतु 'रामायण' में भगवान शिवजी ने 'रामचरित मानस' गाया ही।

रचि महेस निज मानस राखा।
पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा।।

'रामचरित मानस' में भगवान शंकर ने यह प्रसिद्ध पंक्ति पार्वती को सुनाई। उसी शिव ने 'कृष्णचरित मानस' भी गाया ऐसा कह सकते हैं। यद्यपि 'कृष्णचरित मानस' शब्दप्रयोग नहीं हुआ है। पर एक चौपाई में उन्होंने समग्र कृष्णचरित गाया है। श्रोता बदलता है। 'रामचरित मानस' में श्रोता पार्वती है। 'कृष्णचरित मानस' की श्रोता कामदेव की धर्मपत्नी रति है। अत: 'कृष्णचरित मानस' भी कह सकते हैं। 'उत्तरकांड' में भगवान शंकर से पार्वती कहती है, 'हरि चरित्र मानस तुम्ह गावा।' सुनकर मुझे अत्यंत सुख की प्राप्ति हुई।

'रामचरित मानस', 'कृष्णचरित्र मानस' और 'हरिचरित्र मानस' ये तीन पंक्तियां लेकर सुरत की रामकथा के केन्द्र में कुछेक बातें राम की, कुछेक बातें भगवान कृष्ण भी करेंगे। शिव ने की है। 'श्रीमद् भागवत' या 'महाभारत' केवल दो पंक्तियों में भी कहा जा सकता है -

जब जदुबंस कृष्न अवतारा।
होइहि हरन महा महिभारा।।

भगवान कृष्ण के जन्म से कथा शुरू की और समग्र कृष्ण कथा शुरू होती है। अवतारकार्य शुरू होता है। भगवान कृष्ण के पुत्र तक की कथा दो पंक्तियों में पूरी की। समग्र कृष्णचरित्र संक्षेप में। 'हरि चरित्र मानस तुम्ह गावा।' अत: कथा का मूल विषय 'मानस-रामकृष्णहरि' है।

गोविंदभाई की फेक्टरी में गया तो सभी ने कहा, सुबह हमारी फेक्टरी का कार्य रामस्तुति से शुरू होता है। यह कितना अच्छा है! यहां प्रशंसा करने का कोई उपक्रम नहीं है। बाप, मैं बहुत प्रसन्न हुआ। यहां सभी एक ही सूर में गाते थे तो मुझे लगा कि मैं फेक्टरी में आया हूं कि राममंदिर में? प्रशंसा करने का उपक्रम नहीं है। पर इस रामकथा के साथ कुछेक शिवसंकल्प जुड़े। कितने दिनों से यह सब चलता है! मुझे कहा गया, 'बापू हमारे यहां के सभी कर्मचारी व्यसनमुक्त है।' यह जानकर मैं प्रसन्न हुआ, बाप! सत्कर्म से तो सभी परिचित है। सदुपयोग करते ही रहते हैं। ऐसा करना ही चाहिए। ऐसा करे वही ठीक है। नहीं तो फिर क्या?

मैं प्रसन्न हूं। यजमान निमित्तमात्र है। बिलकुल सद्भाव से सत्कर्म हो रहा है। तब मेरे दिमाग में 'मानस-रामकृष्णहरि' विषय आया। परमपूज्य ब्रह्मलीन डोंगरेजीबापा द्वारा उनके जीवन का पूरा मोड और फिर सत्संग चलता रहा। कितने ही महापुरुषों के आशीर्वाद उन्होंने प्राप्त किए! प्राप्त आशीर्वाद को वे मुक्त हाथों से बांटते हैं। एक साधु के रूप में मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

आज के प्रथम दिन की भूमिका में आगे बढ़ूं इससे पहले एक बात गंभीरता से कहना चाहता हूं। मैं सबसे अपील करना चाहता हूं कि स्वाइन फ्लू की बातें आई है। सरकार चिंतित है। चिंता करने की जरूरत नहीं है। पर ध्यान रखना है कि छूत न लगे। यहां रामनाम की छूत ही लगेगी। और कोई छूत मैं नहीं लगने दूंगा। रामकृष्ण हरि की छूत सबसे बड़ी है। यह लग जाय तो बाकी सब छूत भूलाई जा सकती है। सावधान रहियेगा।

तो साथ मिलकर आनंद करेंगे। अपेक्षा रहित सत्कर्म हो तो ज्यादा अच्छा लगता है। तो बाप, निष्काम भाव से, केवल परार्थ भाव से रामकथा का आरंभ हुआ है। कल हम ब्यौरे से आगे बढ़ेंगे। प्रसंगों का विवरण करता जाऊंगा।

रामकथा के ग्रंथीय स्वरूप की चर्चा कर लूं। यह शास्त्र है। इसके सात सोपान है। वाणी को पवित्र करने के लिए कहूं! तुलसीदासजी ने 'सोपान' शब्द ही दिया है। 'कांड' शब्द वाल्मीकिजी का है। प्रथम, द्वितीय, तृतीय ... यह सीढ़ी है। 'बालकांड' प्रथम सोपान है। मैंने 'बालकांड' में से राम की चौपाई ली होती तो भी चलता। पर मैंने 'अयोध्याकांड' में से राम की चौपाई ली। कृष्णवाली 'बालकांड' में से ली। तीसरी पंक्ति 'उत्तरकांड' से ली। तो क्रम नहीं दिखाई देगा। 'अयोध्याकांड' से शुरूआत होती है। 'अयोध्याकांड' माने यौवन। जिसका यौवन बालक जैसा निर्दोष होगा उसे कृष्ण मिलेंगे, मिलेंगे, मिलेंगे। सवाल यौवन का है। अत: इस सात सोपानों में तुलसीदासजी ने प्रथम सोपान में सात मंत्रों से मंगलाचरण किया। प्रथम मंत्र में 'वन्दे वाणीविनायकौ।' सरस्वती और विनायक, गणेश की वंदना की। गणपति की स्थापना होनी ही चाहिए।

तो, सात मंत्रों में शंकर-पार्वती, हनुमानजी, वाल्मीकिजी, सीतारामजी इन सबकी वंदना की। 'स्वान्त:सुखाय रघुनाथ गाथा।' पूरी कथा स्वान्त: सुखाय के लिए हैं। तुलसी कहते हैं, मैं गाने जा रहा हूं। उन्होंने ऐसा संकल्प रखा। फिर श्लोक को लोकभूमि पर उतारा कि सामान्य से सामान्य मनुष्य भी समझ सके ऐसी भाषा में लिखा; दीवार के पास सीढ़ी रखकर हम ऊपर चढ़ सकते हैं पर कई ऊपर चढ गए फिर नीचे उतरे ही नहीं! सीढ़ी इसीलिए हैं कि ऊपर चढे, नीचे ऊतरे। स्वयं ने जो प्राप्त किया है उसे समाज के बीच में प्रसादरूप में वितरित करे। 'तथागत' का अर्थ क्या है? 'तथागत' माने बुद्ध। बुद्ध का अर्थ यही है कि जिस मार्ग से उन्होंने प्राप्त किया उसी मार्ग पर लौटे। जब ऐसी स्थिति आए तब पांच वस्तु गिनाई कि देशकाल, जाति, वर्ण, कुल उस में से निकल जाए; इन सबसे पर हो जाय वही मनुष्य है। छोटी-छोटी विचारधारा उसे बांध न सके।

तो बाप, 'स्वान्त:सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा।' ऐसा लिखकर सीढ़ी पर चढ़कर श्लोक के अंतिम सिरे पर पहुंचा ऋषि उसी सीढ़ी से लौटता है। इसे ही अवतार कहते हैं। एक बार प्राप्त कर पुन: लोगों के बीच लौटना। और उस श्लोक को लोक के बीच स्थापित करना। 'तुलसीदासजी संस्कृत के महान विद्वान' ऐसा कहने की जरूरत नहीं है। पर अस्तित्व की व्यवस्था के रूप में यह संत श्लोक को लेकर सीढ़ी से नीचे ऊतरकर और लोकबोली में 'रामायण' की रचना की। प्रथम स्तुति गणेश की कि -

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।

दूसरा स्मरण किया है -

मूक होइ बाचाल पंगु चढ़इ गिरिबर गहन।
जासु कृपाँ सो दयाल द्रवउ सकल कलि मल दहन।।

संत मानते हैं कि उसमें सूर्य का स्मरण है। तीसरे सोरठे में विष्णु का स्मरण है। चौथे में भगवान शंकर और पार्वती का स्मरण है। आदि शंकराचार्य, अद्वैत के इस महापुरुष ने हमारे जैसे जीवों के लिए गणेश, सूर्य, दुर्गा, शिव और विष्णु जैसे पांच देवों का आश्रय निर्धारित किया है। पांचवें सोरठे में शांकरमत की स्थापना की है। भेद तोड़ डाले। सेतुनिर्माण करना राम का अवतारकार्य है। इसी तरह यह 'मानस' का भी अवतारकार्य है। भेद मिटाने हेतु हुआ है।

मैं डंके की चोट कहता हूं कि मेरा उपक्रम सुधारने का है ही नहीं। कोई किसी को नहीं सुधार सकता। सबको अपना-अपना दीया लेकर निकलना होगा। मेरा कार्य सुधारने का नहीं, स्वीकारने का है। मैं स्वयं को सुधारने का प्रयत्न करूं और दूसरों को स्वीकारने का प्रयत्न करना चाहिए। हम क्या करते हैं? दूसरों को सुधारने का प्रयत्न करते हैं, हमारा स्वीकार हो ऐसे नेटवर्क खड़े करते हैं! यह सूत्र पूरा उल्टा होता है। सबका स्वीकार कीजिए। यह शुद्ध हृदय से होना चाहिए। इसके पीछे नेटवर्क नहीं होना चाहिए। तुलसी के 'मानस' का अवतारकार्य भेद मिटाने हेतु है। सेतु बनना चाहिए। हो सके वहां तक सत्य का आचरण करे। परस्पर प्रेम करे। विश्व करुणामय रहे, इसीलिए ये प्रयत्न है।

तो बाप! शंकराचार्य भगवान का सिद्धांत तुलसीदासजी ने स्थापित किए। तुलसी तो वैष्णव महापुरुष है। उन्होंने 'रामचरित मानस' के प्रथम प्रकरण में स्थापित किया। सारे मतभेदों को तोड़ने का अवतारकार्य पूज्य तुलसीदासजी ने किया। तुलसी ने ये पांच देव स्मरण में रखने को कहा। शंकर, सूर्य, गणपति

दुर्गा और विष्णु। पर युवा भाईयों और बहनों, मेरी व्यासपीठ आपसे बिनती करती है कि आप गणेश की स्तुति कीजिए, पूजा कीजिए। आपकी इस श्रद्धा को प्रणाम। पर गणेशजी की पूजा मानी हमें सत्संग से मिलते विवेक का सन्मान है। हमारा विवेक निरंतर टिका रहे वही गणेशपूजा है। सूर्यपूजा मानी अंधेरे से उजाले की ओर जाने का संकल्प। प्रकाश में जीना है। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय।' विष्णुपूजा का अर्थ है विशालता। हृदय की भावना, विचार संकीर्ण नहीं, विशाल होने चाहिए।

एक गांव में पैसे इकठ्ठे कर रामजी मंदिर का निर्माण किया। तो कृष्णप्रेमियों ने जाना बंद कर दिया! कृष्ण मंदिर बना तो रामप्रेमियों ने जाना बंद कर दिया! फिर तय हुआ, दोनों रखें। तो शंकरभक्त न जाय! कोई निर्णय न होने पाए! एक आदमी ने कहा, चन्दा लेना बन्द करो। सबको इकठ्ठा करना चाहते हो तो श्मशान बनाओ। वहां सभी इकठ्ठे हो जायेंगे! हम मृत्यु के प्रसंग पर ही इकठ्ठे होते हैं! जीवंत में क्यों नहीं इकठ्ठा रहते? साहब, विचार विशाल रखिए। छोटे से छोटे आदमी तक पहुंचने का शिवसंकल्प विष्णुपूजा है। चौथा, दुर्गापूजा। तुलसी ने भवानी की व्याख्या दी है। 'भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।' भवानी माने श्रद्धा। अपनी श्रद्धा न टूटे। अश्रद्धा नहीं; अंधश्रद्धा तो निकाल ही दीजिए। नकली चमत्कारों से बाहर निकलिए। मैंने देवीपूजकों के यहां कथा की तो वचन दिया कि आप अमुक वस्तु बंद कर दीजिए। माताजी कूपित हो तो इसकी जिम्मेदारी मेरी। अंधश्रद्धा या अश्रद्धा नहीं पर श्रद्धा चाहिए। 'गीता' में तीन प्रकार की श्रद्धा बताई है। मुझे ऐसा लगता है कि धीरे-धीरे गुणातीत श्रद्धा में जाना चाहिए। भगवान शंकर की पूजा माने दूसरों का शुभ हो। ऐसे अर्थ में ले सकते हैं।

पांचवें सोरठे में आपको किसी बुद्धपुरुष में पक्की श्रद्धा हो, निष्ठा हो, भरोसा हो तो एक ही बुद्धपुरुष में ये पांचों वस्तु समाहित होती है। गुरु गणेश है, गुरु गौरी है, गुरु विष्णु है; गुरु शंकर है और गुरु सूर्य है। व्यक्तिपूजा के अर्थ में नहीं कहता। जहां से सत्य मिले वहां से लीजिए। सद्गुरुरूपी उद्यान में तरह-तरह के पौधे होते हैं। भ्रमर को सद्गुरु हिदायत नहीं देते कि तुम्हें इस पर फूल नहीं जाना है। तुम्हें यही करना पड़ेगा। वे मुक्त रखते हैं। सद्गुरु बाग है। आपको शास्त्र में से शुभ मिलता है, ले लीजिए। इस फूल में से रस मिलता है, ले ले। यहां से सत्य मिलता है, ले ले। संकीर्णता नहीं होनी चाहिए। गुरु बांधता नहीं है। यदि गुरु को मानते हैं। अंत में मनुष्य को यात्रा तो खुद ही करनी पड़ती है। तो गुरु में ये पांचों वस्तु रहती है। पांच सोरठा में पंचदेव का स्मरण किया है। फिर तुरंत गुरुवंदना का प्रकरण शुरू होता है -

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

'रामचरित मानस' में जब चौपाई में कथा शुरू होती है तो आप सब जानते हैं, प्रथम प्रकरण गुरुवंदना का है। गुरुवंदना माने विवेक की वंदना, विश्वास की वंदना। गुरुवंदना माने गुणातीत श्रद्धा की वंदना; माने उस जीवन में जो प्रकाश है उसकी वंदना; माने हृदय की विशालता की वंदना। ऐसा कुछ मिले चाहे वह धोती में हो तो भी चलेगा। तत्त्वत: सोचना है। अत: तुलसी ने प्रथम गुरुवंदना की है। गुरु का गणवेश नहीं, गुणधर्म देखना चाहिए। गणवेश की महिमा भी है। तुलसी ने गुरुपद की वंदना की। पहली चौपाई -

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

तो गुरुवंदना की। जिसे गुरुपद में श्रद्धा न हो वह स्वतंत्र रीति से साधना कर सकता है। सबको स्वतंत्रता देनी चाहिए। पर जब मैं अपना विचार करता हूं तब मुझे हमेशा लगा है कि किसी बुद्धपुरुष की जरूरत रहती है। किसी मार्गदर्शक की आवश्यकता रहती है। मैं तो अपने स्तर से गाता रहा -

गुरु, तारो पार न पायो, हे, न पायो,
प्रथमीना मालिक, तमे रे तारो तो अमे तरीए ...

कोई मार्गदर्शक जो हमें उजाले में ले जाए। तो गुरुपद की वंदना, गुरुपद नाखून की ज्योति की वंदना और गुरुपदरज की वंदना तुलसीदासजी ने की। मेरे नयन गुरुपदरज से आंजक, मेरी आंखों को दग विवेक देकर अब मैं रामकथा कहने जा रहा हूं, ऐसी तुलसी की घोषणा है। गुरु चरणरज आंख का अंजन हो जाय फिर पूरा जगत वंदनीय लगता है। फिर निंदा की जगह रहती नहीं है। कहीं किसी की निंदा होती हो तो समझना अभी भी आंखों में मोतियाबिन्द है! हिसाब सीधा है। एक धर्म दूसरे धर्म की निंदा क्यों करे? एक विचारधारा दूसरी विचारधारा को तोड़ने का प्रयत्न क्यों करे? अपने यहां कहा गया है कि 'मा विद्विषावहै।' गुरु-शिष्य के बीच भी कलह हो सकती है। जिसकी गुणातीत श्रद्धा नहीं होती उस शिष्य को गुरु पर थूकते देर नहीं लगती! सचमुच बुद्धपुरुष हो

> मैं तो मानता हूं, कोई किसी की निंदा करे तब समझना कि अभी भी आंख में मोतियाबिन्द है! सीधा हिसाब है; नहीं तो एक धर्म दूसरे धर्म की निंदा क्यों करे? एक विचारधारा दूसरे की विचारधारा को तोड़ने का प्रयत्न क्यों करे? अपने यहां तो कहा है कि 'मा विद्विषावहै'; गुरु-शिष्य के बीच भी कलह हो सकती है। ये ऋषि कितने जाग्रत थे कि गुरु-शिष्य के बीच द्वेष भी न हो। क्योंकि द्वेष होते हैं! जिसमें गुणातीत श्रद्धा न हो तो ऐसे शिष्य को गुरु पर थूकते देर नहीं लगती! पर बुद्धपुरुष योग्य हो तो कहते हैं कि तेरी थूक की ज्यादा कीमत है या मेरे फूंक की कीमत ज्यादा है? मैंने जो तुझ पर फूंक मारी है, उसे निकाले तो सही! थूक तो कोई भी निकाल सकता है।

तो ऐसा कहे कि तेरे थूक की कीमत ज्यादा है या मेरे फूंक की कीमत ज्यादा है? मैंने तुझ पर जो फूंक मारी है उसे तू बाहर निकाल सकता है? थूकता तो कोई भी है! फूंक को बदल डाले तो बराबर। यह फूंक की महिमा है। अपने यहां सद्गुरु की महिमा ऐसी गाई है। पर वे हमें बांधे नहीं, मुक्त रखे। विश्व को ऐसे बुद्धपुरुष की जरूरत है। तुलसी ने ऐसे बुद्धत्व की वंदना की है। पूरा जगत राममय दिखाई दिया। किसकी निंदा करूं? अत: तुलसीदासजी ने राक्षसों की भी वंदना की। तुलसी की प्रसिद्ध चौपाई -

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

मुझे ऐसा कहने की इच्छा होती है पर ऐसा कर नहीं सकते। पर कर सके तो हमें आनंद आता है कि जिसकी रात बिना नींद की होती है और जिसका दिन निंदा बगैर का होता है, तो उसका संग कीजिए। रात में कम नींद है, बिना सपने की नींद है फिर भी स्फूर्ति है -

रात है सिर्फ सन्नाटा है, वहाँ कोई नहीं गया है।

उसके दरोदीवालकी 'गालिब' चलो हम चुंबन करते चले।

गालिब का शेर है। रात में बिलकुल सन्नाटा है, जहां कोई द्वैत नहीं है। एकदम अद्वैत है। ऐसे स्थान में जाकर हम अपनी भक्ति अर्पण करें। यह है दिव्य दृष्टि का प्रमाण।

तो सबकी वंदना की है। पूरा जगत सुंदर, ब्रह्ममय है। 'उपनिषद' की बात सीयाराममय बनाकर स्थापित की। नरसिंह महेता का पद -

सकल लोकमां सहुने वंदे निंदा न करे केनी रे ...

यों सबकी वंदना करते-करते तुलसीदासजी ने कथाक्रम में हनुमानजी की वंदना की है। व्यासपीठ का प्रवाही क्रम है कि पहले दिन की कथा को हनुमानजी की वंदना तक ले जाता हूं। हनुमंत वंदना माने विश्वास की वंदना। भरोसा और असंग की वंदना। ये हनुमानजी की वंदना करते हैं -

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

मैं आपको एक बात कहूं? यह आकाश किसी एक संप्रदाय का है? आकाश, जल, पृथ्वी, सूर्य, हनुमानजी सबके है। सांप्रदायिक लेबल मत लगाइए। हनुमंततत्त्व प्राणतत्त्व है। मैं इतने वर्षों से कथागायन करता हूं। मैं हर बार कहता हूं, यह किसने घूसाडा है कि बहनें हनुमानजी की वंदना नहीं कर सकती! 'हनुमानचालीसा' नहीं बोल सकती! यदि हनुमानजी में बहनों और भाईयों का भेद हो तो मैं उन्हें हनुमान न कहूं, सिर्फ 'अनुमान' कहूं! लंका की राक्षसनियां हनुमानजी की पूजा करती हैं तो मेरे देश की बहनें-बेटियां पूजा नहीं कर सकती? हनुमानजी सबके हैं, प्राणवायु है। हनुमानजी की साधना करना चाहते हैं तो उनके भयानक रूप की साधना मत करना। उनके अन्य रूप भी है। पर कलियुग है। उनके सौम्यरूप की साधना करनी है। मैं तो कहता हूं, यदि आपको गुरु न मिले तो हनुमानजी को गुरु मानिए। कोई उपाधि नहीं और दक्षिणा मागने भी न आए!

तो बाप, तुलसीजी ने हनुमानजी की वंदना की है। अपने यहां हरिभाई कोठारी एक अच्छे चिंतक-विचारक हुए। उन्होंने सुंदर बात बताई कि रामजी के मंदिर में हनुमानजी रखने पड़े। कोई भी मंदिर हो, हनुमानजी चाहिए ही। पर हनुमानजी के मंदिर में राम को रखे ही ऐसा नहीं है। हनुमानजी अकेले ही काफी है। किसी भी संप्रदाय की साधना कीजिए, किसी भी उपासना के क्षेत्र में सरलता से, निर्विघ्न, बिना अहंकार पार उतरना हो तो हनुमानजी का अनादर मत कीजिए। 'मानस' में सीतारामजी की वंदना करने से पहले हनुमंततत्त्व की वंदना की है। 'विनयपत्रिका' के पद से वंदना करता हूं -

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

मानस-रामकृष्णहरि
।। २ ।।

स्पर्धा से नहीं, श्रद्धा से कर्म करना चाहिए

'मानस-रामकृष्णहरि', 'रामचरित मानस' की तीन पंक्तियों द्वारा इस कथा का केन्द्रीय विचार निश्चित हुआ। केन्द्रस्थ रहकर संवादी सूर में हम तात्त्विक-सात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। कल मैं भूल गया। दो महानुभवों का यहां पर सन्मान हुआ। अपने-अपने क्षेत्र में की सेवा को ध्यान में रखकर सन्मान हुआ, उन्हें भी मेरा नमन। आज दो संस्थाओं के वरिष्ठजन का सन्मान हुआ, उन्हें भी वंदन। अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। कल वह भी रह गया था, क्योंकि कई वर्षों से कथा में किसी विधिविधान को ज्यादा महत्त्व नहीं देता हूं। मैं विधिविधान को आदर देता हूं, होना भी चाहिए। पर कभी-कभी विधियां शुष्क बन जाती है। अत: मैं कथा को 'ज्ञानयज्ञ' न कहकर प्रेमयज्ञ कहता हूं। अत: बहुत विधिविधान नहीं होते। यहां इतना पूजनीय पाठकगण 'मानस' का पाठ करते हैं। हम ये सब नहीं करवाते, तो रह गया। पर मैं आप सबको प्रणाम करता हूं। आदरणीय वरिष्ठजन मेरे नगीनदासबापा, उन्होंने विशेष मार्गदर्शन दिया। मैं उन्हें विशेष प्रणाम करता हूं। उन्होंने अपनी शैली में व्यासपीठ की सत्य-प्रेम-करुणा की प्रस्थानत्रयी को प्रस्तुत की। यह तो वैश्विक सूत्र है। ये मोरारिबापू के सूत्र हैं ऐसा नहीं, पर मैंने स्वीकार किए हैं; यह मेरा मारग है। मैं कहता रहा हूं कि कट्टरता, जिद्द, अहंकार छोड़ दे तो कौन-सा धर्म है जो इस सूत्र का इन्कार कर सके? बाकी जिद्दी को हम क्या कहे? ये सनातन सूत्र है। मुझे 'रामचरित मानस' से मिले। 'रामायण' का आरंभ 'सत्य' है। क्योंकि यह 'रामचरित मानस' है। 'रामायण' का मध्य जिसमें भरतचरित्र है, यह 'प्रेम' है और 'रामचरित मानस' का अंत जिसमें 'करुणा' की बात है। शास्त्र अनंत होते हैं।

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

समापन में करुणा है। मेरी व्यासपीठ को ये तीन सनातन सूत्र 'रामचरित मानस' में से मिले। उसे शास्त्रों का बल मिला। अनेक संतों-महंतों-विद्वानों का समर्थन मिला। एक वस्तु याद रखियेगा। जिस वस्तु का विद्वान स्वीकार न करे और जिस वस्तु को साधुसमाज सन्मान न दे उस पर पुनर्विचार करना चाहिए। विद्वान माने केवल शिक्षित नहीं पर जिन्होंने कुछ जाना है, आंखों देखी बात कर सकते हैं, वे आदर न दे तो यह श्रम है। 'साधु समाज जानिति सन्मानु।' जिस विचार को साधुसमाज सन्मान दे। 'आदर' और 'सन्मान' में फ़र्क है, साहब! ये तुलसी के मंत्र है। ये शास्त्र मुझे पुन: विचार करने पर मजबूर करते हैं। आदर और सन्मान अलग-अलग वस्तु है। साधुसमाज के आगे कोई विशेषण नहीं है। साधु माने साधु। वे सन्मान करे।

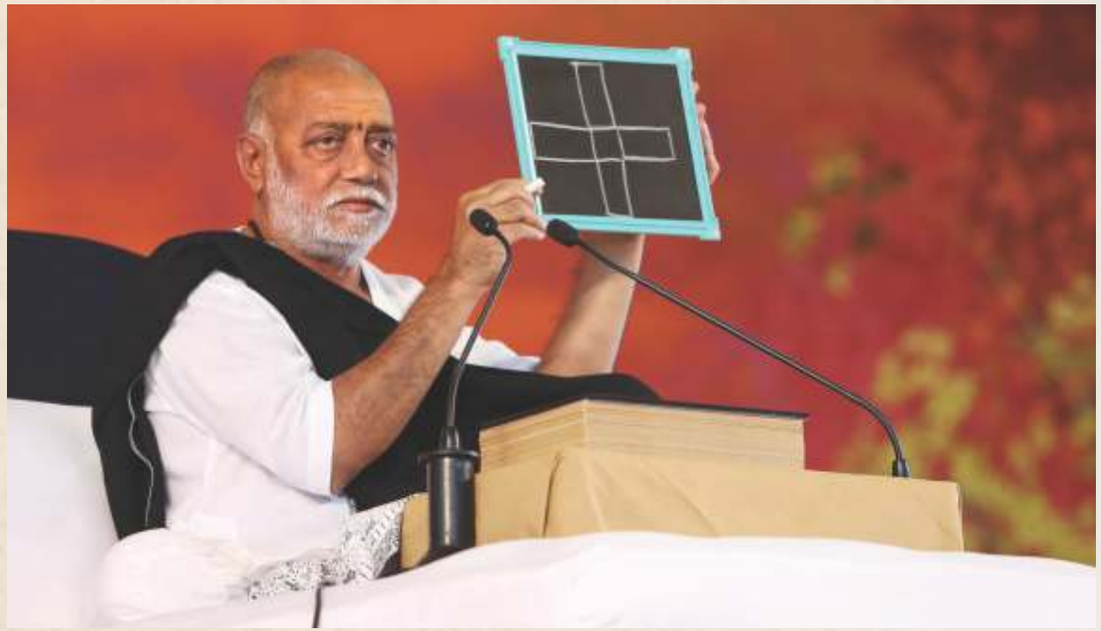

मुझे इन तीन सूत्रों का सनातन सहारा मिला। बापा ने शाश्वती विचार की बात एक अलग परिप्रेक्ष्य में रखी। मुझे विशेष जानकारी मिली। 'प्रेम' शब्द को देहरी दीपक न्याय के रूप में स्थापित किया और परिभाषित किया। यह मेरे लिए मार्गदर्शक है। मुझे इन विचारों से विशेष बल मिला। मैं 'गीताइ' उद्घाटन में विनोबाजी से मिला। अच्छा लगा। तब तो गीताइ मंदिर का ओपनिंग था। फिर कुछ पढ़ा। कुछ साक्षात् देखा। विनोबाजी 'सत्य-प्रेम-करुणा' शब्द ब्रह्म का ज्यादा उपयोग करते थे। मेरे 'मानस' के तीन सूत्रों को एक प्राज्ञपुरुष द्वारा बल प्राप्त हुआ। आज बापा ने अपनी शैली में बातें की। इन विद्वानों के पास, साहित्यकारों के पास, कवियों के पास, संतों के पास बैठना यह मेरा सत्संग है। याद रखियेगा, सौराष्ट्र में कहावत है, 'पारकी मा कान वींधे।' यों सत्त्व-तत्त्व की जीवन्तता दूसरा आदमी ही कर सकता है। पूरे जगत का यह आदरणीय सूत्र है। 'अति परिचयात् अवज्ञा।' जो जिससे ज्यादा परिचित होगा वह उसका अपमान भी जल्दी कर बैठेगा। दूसरा ज्ञाता ही कदर कर सकता है। पारकी मा ही कान वींधी सके। आप सब तरह से ज्ञाता है पर जब कोई बुद्धपुरुष सत्य कहे तब उसका बल बढ़ जाता है।

आज मुझे कहने का मौका है। आज किसी ने प्रश्न पूछा है कि ''वशिष्ठजी ने 'योगवाशिष्ठ्य' रामायण लिखा है। जिसमें राम को उद्वेग हुआ है। राम विश्वामित्र को प्रश्न पूछते हैं, जिसमें एक जिज्ञासा ऐसी है कि व्यासजी ने शुकदेवजी को सबकुछ बताया। शुकदेवजी जानते थे और व्यास ने सब कुछ कहा। फिर भी व्यासजी ने शुकदेव को जनकराजा 'साधु के पास क्यों भेजा?' क्योंकि 'दूसरी मा ही कान वींधे!' पर पहले मुझे इस प्रश्नकर्ता की भ्रांति तोड़नी चाहिए कि 'योगवाशिष्ठ्य' के प्रणेता वशिष्ठ नहीं, वाल्मीकि है। वशिष्ठजी और रामजी का बहुत बड़ा आध्यात्मिक संवाद है। शुकदेव को वे परिपूर्ण समझा नहीं सकते। इतना ही नहीं शुकदेवजी ओलरेडी सत्य को जानते हैं। फिर भी व्यासजी यह निर्णय करते हैं कि 'शुक! तू जनकराजा के पास जा।' कल गुरु की बात हो रही थी न? मेरे व्यक्तिगत विचार अनुसार हमें किसी के पास जाना चाहिए।

तो युवा भाईयों और बहनों, कभी किसी के पास जाना पड़े तो शर्म और अहंकार को छोड़कर जाना। शुकदेव सब जानते थे फिर भी जनक के पास भेजे गए। कथा ऐसी है कि जनकराजा को खबर दी गई कि 'शुकदेव नामक योगी युवा आपसे मिलने आया है।' जनक ने कहा, 'उसे सात दिन बाहर खड़े रखो।' जनक ने शुकदेव को नगरप्रवेश करने नहीं दिया। फिर खबर दी कि शुकदेवजी अटल खड़े हैं। कहा, सात दिन से खड़े हैं, अब अंदर आने दीजिए। फिर अपने राजमहल के द्वार पर फिर सात दिन खड़े रखा। 'अब अंदर आने दे?' तो कहा, नहीं, बस अब बहुत हुआ! उसे संपूर्ण सन्मान दे। शुकदेवजी के चरण में जनकराजा ने सब सुख रखे। शुकदेवजी किसी भी भोग में लिप्त नहीं हुए, असंग रहे। कहीं दाग नहीं पड़ने दिया। जनकराजा ने बुलावा भेजा। फिर प्रश्नोत्तरी हुई। वे पूछते हैं कि परमतत्त्व को पाने के बाद भी विश्रांति क्यों नहीं मिलती? सयानों के बताए मार्ग पर हम चले, आशीर्वाद मिले तो बल प्राप्त होता है। हौसला बढ़ता है। अत: साधुसंग करना चाहिए। विचार के साधुओं का संग करना। साधु के वेश का भी महत्त्व है। मैं इसकी आलोचना नहीं करूंगा।

एक दूसरा प्रश्न कि 'मैंने चार बार आत्महत्या का प्रयत्न किया। मैं प्रेम में था!' प्रेम कभी भी आत्महत्या की छूट नहीं देता। आप वहम में रहेंगे! सनकादिकों ने नारद से कहा, 'तेरे पास मंत्र है पर आत्मप्रेम नहीं है। नारद! अभी भी किसी के पास जाकर सीख ले। तूने आत्मरति गंवा दी है। प्रेम चाहिए।' यह सनकादिक नारद के संवाद में लिखा है। युवा ने लिखा है, 'परंतु बापू, मैंने कथा सुनी। बहुत आनंद हुआ। अब मरना नहीं है। मेरी इच्छा है, जहां आपकी कथा हो वहां मैं सेवा करूंगा।' पर प्रथम माँ-बाप की सेवा करनी चाहिए। परिवार में भाई-भाभी की सेवा करो। कोई योग्य पात्र मिले तो ब्याह कर लो। समाज की सेवा करो, पर्यावरण से प्रेम करो। आपका जिसने बुरा किया है उससे भी प्रेम करो। शत्रु से भी कटुता न रहे यह सबसे बड़ी सेवा है। रामकथा के बारे में जानते हैं। रामकथा किसी न किसी संदर्भ में नूतन है। आपकी उम्मीद व्यासपीठ की सेवा करने की है तो भाई मैं नमन करता हूं। घर से सेवा की शरूआत करो। फर्ज अदा कीजिए। खेती करते हो तो खेती कीजिए।

वर्ड्ज़वर्थ और उनकी पुत्री स्कोटलेन्ड घूमने गए। एक कृषक कन्या अपने खेत में काम करती थी। अपनी भाषा में गीत गा रही है। वर्ड्ज़वर्थ यह भाषा समझ नहीं सके। पर गीत को सुनकर उन्होंने एक दूसरी कविता लिखी। ऐसा संदेश दिया कि कोई खेत में काम करता हो तो उसे डिस्टर्ब मत कीजिए। यही बड़ी सेवा है। नरसिंह महेता ने कहा -

आपणे आपणा धर्म संभाळवा,
कर्मनो मर्म लेवो विचारी.

आंख कहे, मुझे नहीं देखना। मैं क्यों देखूं? मुझे तो पांव होना है। ठीक है? ना नहीं है। पैर कहे, मैं क्यों नीचे रहूं? मैं आंख होना चाहता हूं। यह ठीक नहीं। ज्यों अंग अपने धर्म का पालन करते हैं, यों समाज के अंगों को भी अपने धर्म का पालन करना चाहिए। हमारे वसंतबापू ने एक कविता दी है। उन्होंने 'रामायण' की सीढ़ी की कविता लिखी है -

अमे निसरणी आधारे अवनिमां ऊभा रे,
चडनारा अमने बहु मळ्या.
नानी एवी निसरणी ने सात एना बाया,
प्रेम-करुणाना कीधा एना पाया ...

और जो 'चडनारा नथी मळ्या', यह भगतबापू की कविता है। उस समय महापुरुष काफी आए पर कोई अनुयायी नहीं मिले। पर अब आप सीढ़ी धरती पर रखिए और आप थोड़े नीचे उतरिए तो लोग चढ़ने के लिए तैयार है। और यह इसका प्रमाण है। सबके घर में टी.वी. होते

हुए भी मंडप में क्यों आये हैं? आप उन्हें प्रेम करे, सब चढ़ने के लिए तैयार है। पुन: कल का सूत्र-सुधारने की ममता छोड़ दे, सभी को स्वीकारने का परमधर्म अपनाइए। चढ़नेवाले है ही। 'कथा सुणी सुणी फूट्या कान' अब नहीं रहा। 'फूट्या कान' माने अब नए कान प्रस्फुटित हुए हैं। श्रवण विज्ञान जाग्रत हुआ है। दिला ने दो शेर भेजे हैं -

इस शख्स से इतना ताल्लुक है 'फ़राज़',
वो परेशां हो तो हमे निंद नहीं आती।

पाकिस्तान से मरहूम शायर फ़राज़साहब का शे'र है। उस आदमी से हमारा ऐसा संबंध बंध गया कि वो तकलीफ में हो तो हमें निंद नहीं आती।

इस कथा का केन्द्रीय विचार 'मानस-रामकृष्णहरि' है। राम माने सत्य। बापा ने कहा, सत्य सापेक्ष होता है। सत्य, राम ऐसे तत्त्व है। तुलसी ने ब्रह्मतत्त्व कहा है। राम ब्रह्म है। आप कहेंगे, राम ब्रह्मतत्त्व है तो फिर राम को उदासीनता क्यों आई? यह अविगत ब्रह्म है। इसका ब्यौरा हम नहीं दे सकते। भूमि मिले पर भूमिका समझ में न आए तो इसका अर्थ यह हुआ कि हम ब्यौरा नहीं पा सके हैं। रामतत्त्व को समझने के लिए भूमिका की जरूरत है। उसका ब्यौरा नहीं दिया जा सकता। कई लोग कहते हैं, राम रो पड़े! राम को रोना चाहिए। जानकी वियोग में राम रोए न होते तो उन्हें इष्ट होने का अधिकार न मिलता। राम को रोना चाहिए। जो जानकी उनके कदम दर कदम पर इतने बलिदान दे उस सीता का अपहरण हो जाय और राम की आंख में आंसू न आए तो उनका अवतारकार्य अधूरा रह जाय। राम 'अलख' तत्त्व है। उन्हें जानना मुश्किल है। राम 'अनादि' है, आदि-अनादि है। शरीर धारण कर अवतार लेते हैं। सगुण बनते हैं। एक विशेष कृपा कर आए यह अलग वस्तु है। बाकी मूल में रामतत्त्व ब्रह्मतत्त्व है। जिस राम के ब्रह्मतत्त्व का इन्कार करे और केवल उनकी मानवीय लीला पर आधारित रहकर उसका मूल्यांकन करे तो उन्होंने रामको एकांगी दृष्टि से देखा है।

उसी तरह कृष्ण। कृष्ण प्रेम है। हम प्रेम को भी कहां पूरी तरह से पहचान पाए हैं? 'जे कोई प्रेमअंश अवतरे।' प्रेम कठिन तत्त्व है। भाईयों-बहनों, भूमिका समझनी पड़े। भूमि तो है। 'रामायण' के संदर्भ में विचार करें तो आपको कितने ही प्रकार की भूमि मिलेगी। कितनी भूमि का वर्णन है? उन भूमियों के वर्णन हमें तात्त्विक रूप से भूमिका की ओर ले जाते हैं। तो ही रामतत्त्व समझ में आ सके। एक तो 'जन्मभूमि मम पुरी सुहावत।' 'रामायण' में एक नाम है राम की जन्मभूमि। दूसरा शब्द कल प्रयुक्त हुआ, 'पचास वर्ष इस व्यक्ति की यह कर्मभूमि'; पर उसका पूरा ब्यौरा और समझ तभी आए जब हम भूमिका समझे। राम को मनुष्यरूप में आने के लिए माता-पिता चाहिए। दूसरा शब्द, 'कर्मभूमि।' जो अपना कार्यक्षेत्र हो। कर्मभूमि की भी भूमिका है कि कर्म करें तो निमित्त बनकर करें, नमित बनकर न करें। ये भूमिकाएं हैं। योगी बनकर कर्म करना है। 'योग: कर्मषु कौशलम्।' एक खास बात, स्पर्धा से नहीं, श्रद्धा से कर्म करना चाहिए। जब-जब हम स्पर्धा में उतरे हैं तब पीटे गए हैं। जितने पर अभिमान आए, हारे तो उदासीनता छाए। श्रद्धा से कर्म कीजिए। कर्म की यह दूसरी भूमिका है। लोग ऐसा कहते हैं कि स्पर्धा न करे तो विकास रुक जाय। अन्य के साथ न करे। स्वयं के साथ करो कि इस वर्ष मैं इतनी प्रगति करूंगा। औरों को भूल जाओ। नहीं तो संघर्ष होगा। स्पर्धा सुख दे सके, विजय पताका फहरा सके पर भीतरी शांति न दे सके।

तीसरी भूमि 'कठिन भूमि कोमल पदगामी।' तुलसी जिसे 'कठिन भूमि', 'अगम भूमि' कहते हैं। यह हनुमानजी के मुंह से निकला शब्द है। 'किष्किन्धाकांड' में है। कठिन भूमि कौन-सी है? इसकी तीन भूमिका है। वनभूमि, पर्वतभूमि, अगमभूमि, रणभूमि कठिन है। रणांगण भी भूमि है। ज्ञानभूमि, जहां से हमें ज्ञानप्राप्त

हुआ हो। निर्वाणभूमि, जहां निर्वाण होता है। जैसे बुद्ध भगवान ने ज्ञान प्राप्त किया और निर्वाण पाया वह निर्माण भूमि। प्रेमभूमि, जिसे भागवत में वृंदावन कहा गया। 'मानस' की भाषा में यह चित्रकूट है। यह प्रेमभूमि है। पर इन सबकी भूमिका समझनी पड़े। तो, थोड़ा-बहुत ब्यौरा दे सके, लिख सके।

रामतत्त्व सत्यतत्त्व है। कृष्णतत्त्व प्रेमतत्त्व है। शिवतत्त्व या हरितत्त्व करुणातत्त्व है। मैंने कई बार कहा है, जहां सत्य होगा वहां अभय होगा। अपने पक्ष में जितना सत्य ज्यादा उतनी निर्भयता ज्यादा होगी। 'साधु' माने क्या? साधु कभी भय नहीं रखता। सत्य की मात्रा कम हो गई हो तो दूसरी बात है। सत्य परिवार में संतान जन्म लेती है, उसका नाम अभय है। सत्य परिवार में एक ही बालक जन्म लेता है, उसका नाम अभय है।

दूसरा सूत्र प्रेम। प्रेम परिवार में बालक का जन्म होता है उसका नाम त्याग है। प्रेम भक्ति का पर्याय है। हमने प्रेम को सस्ता कर दिया है! प्रेम होगा वहां त्याग आयेगा। सचमुच परिपूर्ण प्रेम होगा, नौ मास का गर्भ होगा तो पुत्र जन्म होता ही है। त्याग का जन्म होता ही है। 'त्याग' शब्द आने पर निष्कुलानंद महाराज का स्मरण होता है -

त्याग न टके रे वैराग विना, करीए कोटि उपायजी;
अंतर ऊंडी इच्छा रहे, ते केम करीने तजायजी.

उन्होंने कितनी बड़ी बात इस पद में की! तीसरा सूत्र करुणा। करुणा के यहां पुत्री का जन्म होता है। पुत्री का जन्म महत्त्वपूर्ण है। अब तो पुत्रियों पर कथाएं होती है। यह सब अच्छा है, स्वागत योग्य है। करुणा की पुत्री का नाम अहिंसा है। करुणा होगी वहां अहिंसा होगी। हिंसा हो तो समझ लेना इसकी भूमिका में करुणा नहीं है। गांधीजी क्यों अभय थे? गोरा प्रोफेसर ने गांधीजी से पूछा, 'कोई ५000 पाउन्ड रास्ते पर डाले और एक गठरी में सयानापन डाले तो मि.गांधी, आप क्या लेंगे?' गांधी ने कहा, 'मैं पाउन्ड ही लूंगा।' गोरा ने पूछा, 'क्यों?' तो कहे, 'जिसके पास जो न हो वही ले न! विझडम तो हमारे पास पहले से ही है।' यह गांधी! ऐसा अभय! महान पुरुष अति विचित्र, विनोदी होते हैं। मुझे लगता है, बहुत गंभीर बना दिया हैं। आप हंस ही नहीं सकते! पर हमने क्या गुनाह किया है? मेरा राम बोले, इससे पहले हंसे। कृष्ण ने तो हमें नाचने तक का सिखा दिया है। कम अज कम चहेरे पर हास्य तो आने दीजिए! धर्म हंसता हुआ होना चाहिए। धर्म आखिरी आदमी का सन्मान करता हुआ होना चाहिए।

तो, सत्य, प्रेम, करुणा की यह व्याख्या है। तीनों की भूमिका समझनी होगी। इसीलिए इस कथा का नाम सत्य-प्रेम-करुणा, 'रामकृष्णहरि' रखा है।

कथा का क्रम आगे बढाए। प्रथम दिन पर कथाक्रम अतिसंक्षेप में हनुमानजी की वंदना तक ले गए। हनुमानजी के बारे में कल थोड़ी बातें की। फिर तुलसीदासजी ने सीतारामजी की वंदना की। फिर नव दोहे में रामनाम की वंदना और महात्म्य गाया। तुलसी ने कहा, कलियुग में केवल मनुष्य अपने इष्टदेव के नाम का आधार रखे। मेरा कोई आग्रह नहीं है। तुलसी का भी कोई आग्रह नहीं कि नाम माने रामनाम ही। कृष्ण, शिव, जगदंबा, अल्लाह, बुद्ध कोई भी नाम। आपका जो भी मार्ग हो; आपकी श्रद्धा में जिस नाम द्वारा प्रसन्नता प्राप्त होती हो। कलियुग यह नाम के महिमा की मौसम है। सतयुग में ध्यान से जो तत्त्व मिले वह कलियुग में नाम से मिले। त्रेतायुग में यज्ञ करने से परमतत्त्व मिले वह कलियुग में केवल प्रभुनाम से मिले। कलियुग में ध्यान न धरे एसा मेरा कहने का हेतु नहीं है। आप ध्यान धरे, योग-यज्ञ करे। शायद यज्ञ करे तो बलिदान बंद ही कीजिए। यज्ञ बलिप्रथा बंद होनी ही चाहिए। आचार्यों को कहना चाहिए। ब्राह्मण देवताओं को कह देना चाहिए कि यज्ञ करायेंगे पर बलि नहीं चढ़ने देंगे। ये सभी

तो यही है। क्योंकि भाव तो यही है। क्या यह गोपीभाव नहीं है?

तव कथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंगलं श्रीमदात्ततं भूबि गृणन्ति ते भूरिदा जना।

गोपी की पीड़ा है। यह तडप हमारी रात-दिन की है। कहां जाय? गरीब परिवार हो न बाप! लडका बीमार पड़े, इलाज के पैसे न हो वह पीड़ा गोपियां भुगतती है, क्योंकि इलाज के पैसे न हो ऐसा नहीं है। व्रज दहीं-दूध से संपन्न है। इसीलिए तो कंस टेक्स डालता था। व्रज समृद्ध है। पूरे देश का अर्थतंत्र गोधन पर चलता था। इस देश में गौपूजा यूं ही नहीं होती थी। उसे केवल धार्मिकता से मत देखिए। मैं तो बिनती करता हूं, गाय पूज्य है, गाय पूज्य है, पर अब ऐसा बोलिए, गाय प्रिय है। बाप, हम वध नहीं करते! पांच पैसे देकर छूटकारा भी ले सकते हैं। बाप, व्रज समृद्ध हैं। गोपियां कहती है, रोग ही ऐसा लागू हुआ है कि जिसकी कोई औषधि नहीं है। इसका इलाज एकमात्र आपका दर्शन हैं। दर्शन न हो तो कोई बात नहीं। हमारा स्मरण कम नहीं होना चाहिए। ईश्वर से मागिए, दर्शन न दे तो कोई बात नहीं। उसे कहो, तेरी स्मृति बनी रहे। मैं एक फिल्म की पंक्ति गुनगुनाता हूं -

लो आ गई उनकी याद, वो नहीं आए...

कलियुग में यह उत्तम साधन पद्धति है कि स्मरण बना रहे। मधुसूदन सरस्वतीजी बोले हैं कि आप आफिस का कार्य पूरा कीजिए। आप अपना धर्म बजाइए। व्यापार-खेती-व्यवसाय-नौकरी सबका पालन कीजिए। चौबीस घंटे में जब सारे कार्यपूर्ण हो जाय, सोने जाईए पर निंद न आए तब वे कहते हैं, यह वही समय है उसमें उन्हें याद कर लीजिए। कोई शास्त्र ऐसा नहीं कहता कि चौबीस घंटे स्मरण कीजिए। एक पल काफी है।

तो बाप, मेरी चर्चा यह है कि भारत की उदारता बहुत विशाल है। कलियुग में यज्ञ करें तो बलिदान बंद करें। तुलसी ने इक्कीसवीं सदी के नए यज्ञ का स्थापन किया है। तुलसी को लकीर का फकीर मत मानिए। जातुष की कविता है-

ईशारा कोई क्यां समजी शक्युं संतो-फकीरोना,
अहींना माणसो तो माणसो केवळ लकीरोना.

तो बाप, कलियुग में केवल हरिनाम लेने से आंतरिक विकास होता है। इतना अच्छा समय कभी नहीं रहा। कलियुग को गालियां मत दीजिए। यह तो अभी कलि है, फूल कहां बना है? तुलसी कहते हैं -

नहीं कलि करम न भगति बिबेकू।
रामनाम अवलंबन एकू।।

इसकी तुलना में कलियुग में अन्य कोई साधन सरल नहीं है। अत: जीव हरिनाम का आश्रय ले। तुलसी ने पूरा प्रकरण हरिनाम का लिखा। इसका कोई संकुचित अर्थ न करे। फिर से कहूं, तुलसी का राम माने गगन से भी विशाल। जो नाम आपकी श्रद्धा में है वे सभी नाम परमात्मा के हैं। तुलसीदासजी ने ऐसी नामवंदना 'मानस' में की है।

> धर्म के नाम पर, हमारे आग्रहों के नाम पर ये आग बंद होनी चाहिए! वैदिक परंपरा काफ़ी उदार है। बलिदान बंद होने चाहिए। अस्पृश्यता नष्ट होनी ही चाहिए। व्यर्थ बलिदान बंद होने चाहिए। शाप देने की वृत्ति बंद होनी चाहिए। पुराण शाप से भरे पड़े हैं! यदि मेरे पास घडी हो तो ही मैं आपको घडी दे सकूं। मेरे पास रोष और द्वेष हो तो ही मैं शाप दे सकूं। बाप, जगत को प्रेम दीजिए। मैं देश के युवाओं से यही चाहूं कि साल में आप मुझे नौ दिन दीजिए, मैं आपको नवजीवन दूंगा।

आचार्य अब जो करवाते हैं, उसमें कुम्हडा काटते हैं। मैं तो यही कहता हूं, काटने की वृत्ति बहुत खराब है। इस वृत्ति को निकाल दीजिए। मैं तो कहता हूं, यज्ञ कीजिए पर हिंसक दीखावा बंद कीजिए। खुमार बाराबंकवी का उर्दू शे'र है -

चरागों के बदले मकां जल रहे हैं।
नया है जमाना नयी रोशनी है।

चराग जलने चाहिए। हर आंगन में दीये जलने चाहिए। इसके बदले आदमियों के मकान जल रहे हैं! शायर को पीड़ा होती है। वह समाधान ढूंढता है। शायद जमाना नया है। रोशनी का ढंग भी नया है। यह आग बंद होनी चाहिए। यह हिंसा बंद होनी चाहिए। जो धर्म और हमारे नाम से चलते हैं! सनातन वैदिक परंपरा तो बहुत उदार है। बलिदान बंद होने चाहिए। अस्पृश्यता नष्ट होनी चाहिए। बलिदान बंद होने चाहिए। शाप देने की वृत्ति बंद होनी चाहिए। पुराण शाप से भरे पड़े हैं। मैं तुम्हें घडी दे सकूं यदि मेरे पास घडी हो तो ही। मैं शाप तो दे सकूं यदि मेरे पास रोष और द्वेष हो तो ही। बाप, जगत को प्रेम दीजिए। देश के युवाओं से मैं इतना ही चाहूं कि साल में एक बार मुझे नौ दिन दीजिए, मैं आपको नवजीवन दूंगा।

एक वस्तु मैं बारबार कहता हूं कि सत्य अपने लिए रखना। दूसरा बोले या न बोले, इसकी चिंता मत करना। हम को अपनी रीति से करना है। दुनिया तो चलती रहेगी। जितनी बचा सके उतना तो बचाइए। सत्य अपने लिए और प्रेम दूसरों के लिए। परस्पर प्रेम। मेरी 'रामायण' है। 'सब नर करहि परस्पर प्रीति।' मुझे जिसस क्राइस्ट पसंद है। जिसस कहते हैं जो देगा, उसे पिता ज्यादा देंगे। जो नहीं देगा उसके पास जितना भी होगा, छिन लिया जायगा। सत्य अपने लिए हैं। दुनिया अपना सत्य न स्वीकारे उसका क्या अफसोस? दुनिया समझेगी तब स्वीकार करेगी। कल किसीने चिठ्ठी भेजी थी कि मुझे अठारह पुराणों में से सबसे ज्यादा कौन-सा पसंद है? मुझे सभी पसंद है। पर व्यक्तिगत तौर पर कहूं तो मुझे भागवत पुराण ज्यादा पसंद है। यह प्रेमशास्त्र है। मेरा व्यक्तिगत अभिप्राय है कि वैदिक परंपरा में मुझे उपनिषद पसंद है। उसके सार में जाय तो मुझे 'भगवद्गीता' पसंद है। 'गीता' के योग 'रामायण' में प्रयोग कर के रखे गए हैं। इसका निचोड 'रामचरित मानस' है। यह तो मेरा जीवन है। 'रामचरित मानस' में मुझे ज्यादा अच्छा क्या लगता है? 'सुन्दरकांड।' 'सुन्दरकांड' का निचोड 'हनुमानचालीसा' है। 'हनुमानचालीसा' का निचोड आप सब है। मुझे तो मानव तक पहुंचना है। सुरत के कवि रतिलाल 'अनिल' कहते हैं -

नथी एक मानवी पासे हजी एक मानवी पहोंच्यो,
'अनिल' में सांभळ्युं छे क्यारनो बंधाय छे रस्तो.

सुरत के ही गनी दहींवाला कहते हैं -

न धरा सुधी, न गगन सुधी,
नहीं उन्नति, न पतन सुधी,
अहीं आपणे तो जवुं हतुं,
फक्त एकमेकना मन सुधी.

युवा भाईयों-बहनों, कविता तो देखिए! आप अंग्रेजी अवश्य पढिए। पर गुजराती भूलियेगा नहीं। 'हाय हल्लो' में हरि को मत भूलना। गुजराती साहित्य अद्भुत है। किसी को अस्पृश्य मत मानिए। फिल्म की एक अच्छी पंक्ति पसंद हो और ईश्वर के प्रति अर्थ लागू होता हो तो गाने में कोई आपत्ति नहीं है। हीरे के कितने अलंकार बनते हैं। आप कौन-सा हीरा कहां लगाते है इस पर हीरे का मूल्यांकन होता है। समढियाला की कथा का गीत गाऊं -

तडप ये दिन-रातकी, कसक ये बिन बातकी,
भला ये रोग है कैसा, सजन अब तो बता दे...

इन पंक्तियों को कीर्तन कहूं तो इसमें क्या गलत है? इसे भक्तिगीत का दरज्जा दूं तो कौन-सी भूल है? गोपी गीत कहूं तो कौन-सा गुनाह है? क्योंकि भाव

मानस-रामकृष्णहरि
।। ३ ।।

तुलसी के राम सांप्रदायिक नहीं, व्यापक है

कथा का केन्द्रीय विचार राम-कृष्ण-हरि है। जिसके आधार पर हम साथ मिलकर सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। धोलकिया परिवार द्वारा इस कथा के साथ अनेक राष्ट्रीय विचारों को जोड़कर कथा के साथ कितने सुंदर सेवाकीय यज्ञ जुड़े हैं! उसके एक हिस्से के रूप में अमुक-अमुक काम करती संस्थाएं, उनके संचालक, इन सेवाओं में संलग्न व्यक्तियों को बुलाकर उनकी सेवाओं की वंदना करने का उपक्रम बना; आज दो संस्थाओं की वंदना हुई। मेरे नमन स्वीकार कीजिए। एक विचारयज्ञ भी साथ-साथ चलता है। प्रारंभ में यहां अलग-अलग क्षेत्रों की विचारशील व्यक्तियां आए। वे हमें संबोधन करे। इस क्रम में आज गांधीनगर से परमस्नेही आदरणीय भाग्येशभाई ज्हा ने आर.सी.टी. की बात कही। लोर्ड भीखुभाई पारेख जिन्हें कल संतोकबा अवोर्ड एनायत किया गया। वे हमारे बीच में हैं। मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

'रामकृष्णहरि' क्रम को आगे बढ़ाएं इससे पूर्व एक प्रश्न का जवाब देना है। एक विधवा माताजी का प्रश्न है। उन्होंने पूछा है, 'जयश्रीकृष्ण बापू, मैं विधवा हूं। शुभ प्रसंगो में विधवा को अपशगुन क्यों मानते हैं? उनके हाथों से शुभ कार्य क्यों नहीं करवाए जाते?' करुणाजन्य प्रश्न है। मैंने कल भी कहा था, सत्य व्यक्तिगत हो सकता है। प्रेम परस्पर होना चाहिए। करुणा व्यापक होती है। कथा में 'हरि' शब्द का अर्थ व्यापकता है। 'कृष्ण' शब्द जो मध्य में है, वह प्रेम का प्रतीक है। राम सत्य के प्रतीक है। तुलसीदासजी 'हरि' शब्द की व्याख्या करे तब 'व्यापक' शब्द को जोड़ते हैं।

हरि ब्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।

'रामचरित मानस' के कैलासी वक्ता महादेव का यह वक्तव्य है। 'हरि' माने व्यापक। करुणा व्यापक होनी चाहिए। करुणा एकदेशीय नहीं होती। प्रेम भी व्यापक होना चाहिए। हम न पहुंच सके तो परस्पर तो रखे। अत: तुलसीदासजी ने 'प्रेम' शब्द का उपयोग किया। प्रमाण यह है -

सब नर करहिं परस्पर प्रीती।

रामराज्य के नगरजन परस्पर प्रेम कहते हैं। विधवा माताजी का प्रश्न करुणा से भरा है। करुणा व्यापक होनी चाहिए। वियेटनाम का युद्ध पूरा होने के बाद एक अमेरिकन सैनिक और उसका नायक युद्ध कैदी के रूप में पकड़े जाते हैं। ठंडी जोरों पर है। दोनों मुक्त किए जाते हैं। दोनों भूखे हैं। ब्रेड के टुकडे हैं। जेल के दरवाजे के पास खा रहे हैं

एकदम जल्दी! आसपास का ख्याल नहीं रहा। करुणा व्यापक नहीं रहती जब आदमी भूखा होता है। सत्ता, पद, प्रतिष्ठा, पदार्थ का भूखा करुणा खो बैठता है! आंसू नहीं है तो पूरी भौतिकता हमें चबा जायगी। दो भूखे ब्रेड खाते हैं। सामने पांच साल का भूखा बच्चा बैठा है। ओढ़ने के लिए भी कुछ नहीं है। दीवार के सहारे ठंड से बचने की कोशिश करता है। आंख से आंसू बहते हैं। उस समय वे दोनों ब्रेड खाते हैं। भूख के मारे आसपास का ध्यान नहीं रहा। खा लेने के बाद करुणा जगी। परस्पर पूछते हैं, तेरे पास कुछ बचा है? एक ने कहा, एक चोकलेट है। उसने जेब से निकाली। बालक को दी। वह भूखा था। दौड़कर आया। उसने चोकलेट के तीन टुकड़े किए। एक अमेरिकन सैनिक को दिया, दूसरा एक दूसरे सैनिक को दिया फिर तीसरा खुद ने लिया। यह करुणा है। इसे तुलसी 'हरि' कहते हैं। हरिकथा मानी करुणा की कथा। रामकथा मानी सत्यकथा और कृष्णकथा मानी प्रेम की कथा।

एक विधवा बहन पूछती है कि विधवा स्त्री को अपरागुनी क्यों मानते हैं? उसके हाथों से शुभकार्य क्यों नहीं करवाते? मैं बहन की ओर से समाज को प्रश्न पूछना चाहता हूं, गंगाजी को आप शुभ मानेंगे कि अशुभ? शुभ है न? शायद हमारी वजह से थोड़ी अशुद्ध हुई होगी पर उसका भीतर तो पवित्र है। तीनों लोग को पवित्र करनेवाली गंगा हमारे कारण अशुद्ध हुई होगी पर उसकी पवित्रता तो अक्षुण्ण है, शुभ है। यदि हमारा समाज विधवा को गंगास्वरूप कहता हो तो फिर उसके हाथों से शुभकार्य क्यों न हो? व्हाय? समाज की अमुक मान्यता इन्कार करती हो तो ये आचार्य जो पाठ करते हैं उन्हें मेरी प्रार्थना है, कहीं शास्त्र इन्कार करता हो तो ऐसे शास्त्र को वंदन कर हा कर दीजिए। इन सबको हा कह दीजिए। यदि हम इन्हें साक्षात् गंगास्वरूप मानते हो तो उनके हाथों से शुभकार्य क्यों न हो? यह करना ही होगा। जिस बहन ने पूछा है उनको प्रणाम कर कहता हूं कि आपको सभी अधिकार है। किसी कारण किसी शास्त्र की अवज्ञा होती हो या पाप लगने का डर हो तो यह सारा मार तलगाजरडा के इस साधु को लगे। आज की टेक्नोलोजी के कारण आप अपने घर में एक फीट की दूरी से आप मुझे सुन सकते हैं टी.वी. में। कई माताजी तो गरमी के दिनों में यदि मुझे पसीना आता हो तो टी.वी. को पोंछती है! लोगों की ऐसी श्रद्धा है। इस श्रद्धा से न्याय देना गद्दी पर बैठे लोगों की फर्ज है। हमारे तुलसी श्याम के महंतबापू बालकृष्णबापू चलम के बेहद शौकीन! कथा के भी प्रेमी। मैं फिल्मगीत गाऊं और वह झूमे! मेरे तो संदर्भ ही अलग होते हैं। बालकृष्णबापू को वह गीत प्रिय है -

'ओ... तुम को पिया दिल दिया कितने नाज़ से...'

क्या यह गोपीगीत नहीं है? भक्तिगीत नहीं है? इसे कीर्तन न कहे? ऐसी अस्पृश्यता क्यों रखते हो? जहां से सत्य मिले ले लीजिए। मैं पचपन साल से समाज में घूमा फिरता हूं। मेरे अनुभव कहते हैं, कई लोग सत्य बोलते हैं पर दूसरों का सत्य स्वीकारते नहीं। उन्हें कठिन जान पड़ता है! उनके अहम् को ठेस लगती है। मानो उनके ही पास सत्य का ठेका है! सत्य त्रिकाल अबाधित है। जहां से मिले ले लीजिए। क्या यह भक्तिगीत नहीं है? जिस दिन गोप सखाओं, कृष्ण सखियों के नयनों ने कृष्ण देखें होगे, उनकी आंखें उसी में डूबी होगी क्या यह उस समय का गीत नहीं है? आप कैसे लेते हैं इस पर आधार है। अच्छे से अच्छे सूत्र की ऐसी की तैसी कर डालते हैं! शास्त्र को शस्त्र बनते देर नहीं लगती। यह कट्टर विचारधारा का परिणाम है। बाप! इतनी शांति से व्यासपीठ को सुनते हैं तो क्या हम साथ मिलकर समाज में से ऐसी मान्यताओं को बिदा नहीं दे सकते? करुणा का प्राकट्य हो। पुन: कहता हूं, भक्तों के लिए दो चीजें महत्त्वपूर्ण है। एक, रात न हो तो भक्त के लिए बहुत

दु:ख है। दूसरा, आंख में आंसू न हो तो भक्त के लिए पीड़ा है। करुणा न रहेगी तो क्या होगा? बुद्ध को २५०० साल हो गए फिर भी क्यों नजदीक लगते हैं? क्योंकि करुणा है।

बहन, यदि कोई ना कहें तो मेरा नाम लेना। उस वक्त पाप लगे तो मेरे सिर पर! नाझिर देखैया की गुजराती गज़ल है -

खुशी देजे जमानाने, मने हर दम रुदन देजे,
अवरने आपजे गुलशन, मने वेरान वन देजे.

ये छोटी पंक्तियां कितनी बड़ी बात कह देती हैं!

तो बाप, ऐसी मान्यताओं को बिदा कीजिए। मुझे गुरुदक्षिणा नहीं चाहिए। पर आप देना चाहते हैं तो इतना भी नहीं दे सकते? आप अंधश्रद्धा नहीं छोड़ सकते? आप वहम नहीं छोड़ सकते? इसमें से बाहर निकल जाईए, बाप! क्या बलिप्रथा बंद नहीं हो सकती? अस्पृश्यता नष्ट नहीं हो सकती? वक्त पे होश न आया तो यह भौतिकता फाड़ खायेगी। आप इतनी शांति से सुन रहे हैं यह किसका प्रताप है? मोरारिबापू का? ना। इस शांति का कारण आपमें पड़ी हुई श्रद्धा और हरिनाम का प्रभाव है। नहीं तो मुझे पता है, चालीस विद्यार्थीयों को वर्ग में पिरियड लेते थे तब मगन को बिठाए तो छगन खड़ा हो जाय!

तो रामब्रह्म है। रामनाम सांप्रदायिक नहीं है। उसके भाल का तिलक भी किसी एक पंथ का नहीं है। तिलक की महिमा है। पर यह संकीर्ण नहीं है। सखियों ने राम देखे तो कैसे लगे? 'भालतिलक'; कुमारावस्था में राघव है, उनके भाल पर तिलक है। 'श्रमबिन्दु सुहावे।' राम के भाल पर पसीने की बूंदे है। भक्ति अकर्मण्यता का पाठ नहीं पढ़ाती। पसीना बहना चाहिए। साधु परिश्रमी होना चाहिए। तिलक एक पहचान है। जबरदस्ती से तिलक नहीं करना चाहिए। वही तिलक करो। हमें राम की सभ्यता से यह सीखना है।

तो बाप, मैं आपसे बिनती करता था कि मुझे कोई गुरुदक्षिणा नहीं चाहिए। इतनी शांति से सुन रहे हैं तो क्या-कुरिवाज नहीं छोड़ सकते? प्लीज़, थोड़े व्यसन नहीं छोड़ सकते? मैं नौ दिनों तक अमृत पिलाता हूं। तो ऐसा-वैसा पीना बंद कीजिए। चमत्कारों को भूलिए। हरिनाम लीजिए।

ईश्वर के चार लक्षण नाम, रूप, लीला और ध्यान बताए। युवा भाईयों-बहनों, आपकी इच्छा हो तो ही परमात्मा का नाम लीजिए। यह मुख्यस्थ ईश्वर है। नाम माने मुख्यस्थ ईश्वर। रूप माने? पहुंच में वह रूप है। यह सूत्र 'रामचरित मानस' का है। राम-जानकी के ब्याह बाद पहली कोहबर बिधि हुई। अपने यहां गांवों में कौडी से खेलते हैं। परत में पानी डाले। जो सर्वप्रथम अंगूठी खोज ले, घर में उसका चलन रहता है। तुलसी लिखते हैं, मैथिली पद्धति से दोनों खेल रहे हैं उसमें जानकीजी लाल पानी में हाथ फेरते हैं। सखियां बैठी हैं। सीताजी राम को डायरेक्ट नहीं देख सकती। खेलते-खेलते जानकीजी की हीरों से जड़ित चूडी में राम दिख गए। जानकीजी ने हाथ वैसे ही रहने दिया। उसकी सखियां उतावली हो रही है। तुलसी कहते हैं, सीता का बाहु स्थिर हो गया। कारण? यदि हाथ हिल जायगा तो राम दिखते बंद हो जायेंगे। इससे हमें प्रेरणा मिलती है कि ईश्वर पहुंच में रहना चाहिए। परमात्मा की लीला सुनते-सुनते हमारे जीवन में जितना सदाचार आए यह हमारे पहुंच की लीला है। जीवन की शुद्धता धीरे-धीरे बढ़े यह परमात्मा की लीला है। आज आप सब कामधंधे छोड़कर शांति से यहां बैठे हैं। यह धामस्थ ईश्वर है। शंकराचार्य कहते हैं, 'एकान्ते सुखमास्यताम्।'

तो बाप, मैं करुणा की बात करता था। हमें सामूहिक रूप से व्यापकता से करुणा प्रवाहित करनी है। 'मानस -रामकृष्णहरि।'

राम ब्रह्म परमारथ रूपा।
अबिगत अलख अनादि अनूपा।।

तुलसी कहते हैं, रामब्रह्म है। राम केवल दशरथपुत्र होने पर भी ब्रह्म है। कारण? इतिहास बीती बातों की जुगाली करता है। 'राम थे', हम ऐसा नहीं कहते। 'रामब्रह्म है।' तुलसी कहते है कि रामब्रह्म है तो उनके कई रूप है। राम के भी कितने रूप है! सबकी अपनी रुचि अनुसार राम का रूप है। बिनतीरूप कहता हूं, आप जितने भी गांव के रामजी मंदिर जायेंगे तो क्या राम की मूर्ति एक सरीखी पायेंगे? फिर भी सभी राम ही है। कैसे तय कर पायेंगे कि राम का यही रूप है? हमारे पास कोई प्रमाण नहीं है। इतिहास का शिल्प अलग बताए। सभी की रुचि अनुसार तुलसी ने 'रामचरित मानस' में राम के रूपों का निर्माण किया। उसमें एक 'परमारथ रूपा।' राम परमार्थ रूप है। इसके आध्यात्मिक अर्थ की गहनता में नहीं जाना है। पर हम गांव में शब्द का उपयोग करते हैं 'स्वार्थी न बने, परमार्थी बनिए।' हम अपनी औकात के अनुसार परमार्थ करे। दूसरों के लिए कुछ करे। वह राम ब्रह्म है। देशकालानुसार दूसरों के लिए शुभ करने वाले तत्त्व का नाम ब्रह्म राम है।

'आराम दे वह राम', ऐसा तुलसीदास ने लिखा। आपकी बीमारी में डोक्टर जो दवाई दे उससे आराम हो जाय तो उस दवाई को राम मानना सीखिए। आप उद्विग्न हो; मित्रने कंधे पर हाथ रखकर दो बातें की; आपकी उद्विग्नता दूर हुई तो उस समय वह मित्र राम है। तुलसी इस तरह राम की प्रस्थापना करना चाहते हैं। अत: तुलसी का राम सांप्रदायिक नहीं है, वह व्यापक है। कोई भी आदमी परमार्थ का काम करेगा। परमार्थ में रूपये हो तो ही हो सके ऐसा नहीं है। सबको अपनी क्षमता के अनुसार परमारथ करना चाहिए।

युवा भाईयों-बहनों, चार वस्तु का परमारथ करते समय पात्र-कुपात्र मत देखियेगा। किसी को रोटी दो, पानी पिलाओ, बीमार को औषधि दो तब पात्रता-कुपात्रता नहीं देखी जाती। किसी निर्वस्त्र को वस्त्र दीजिए तब ऐसा नहीं देखते। अन्न, जल, औषधि और वस्त्र देते समय पात्रता-कुपात्रता नहीं देखी जाती। अपने भारतीय उपनिषद में कहा गया है कि किसी की थाली में हम रोटी परोसते हैं तब 'अन्नम् ब्रह्मेति व्यजानात्।' हम ब्रह्म परोसते हैं। कोई गरीब विद्यार्थी के पास युनिफार्म न हो तो उसे युनिफार्म दीझिए। ये सभी राम के पारमार्थिक रूप है। तुलसी उसे स्थापित करते हैं। 'मानस' में हर जगह राम के रूप बदलते हैं। आप अपनी रुचि अनुसार ग्रहण करे। तुलसीदास राम को युद्धभूमि में रखे तो उनकी वीरता का वर्णन करे वहां शूरवीरता का रूप है। कईयों को वही पसंद है। कईयों को शृंगारप्रिय राम पसंद है। अपनी रुचि अनुसार निर्णय लेने में कथा के भी भिन्न-भिन्न रूप बताए हैं। राम के भी भिन्न-भिन्न रूप है। फिर भी मूल तत्त्व एक ही है। वह ब्रह्म राम है।

> मुझे कोई गुकदक्षिणा नहीं चाहिए। आप मुझे कुछ देना चाहते हैं तो इतना न देंगे? आप थोड़ी-सी अंधश्रद्धा नहीं छोड़ सकते? थोड़े वहम नहीं छोड़ सकते? बाप, इसमें से बाहर निकल जाइए। बाप, क्या बलिप्रथा बंद नहीं हो सकती? अस्पृश्यता बंद नहीं हो सकती? वक्त पर नहीं जगे तो भौतिकता फाड़ डालेगी! इतनी शांति से आप सुनते हैं तो क्या थोड़े कुरिवाज नहीं छोड़ सकते? थोड़े वहम नहीं छोड़ सकते? प्लीज़, थोड़े व्यसन छोडिए। नौ दिनों का अमृत पिलाता हूं तो ऐसा-वैसा पीना बंद कीजिए! चमत्कार भूल जाइए। हरिनाम लीजिए।

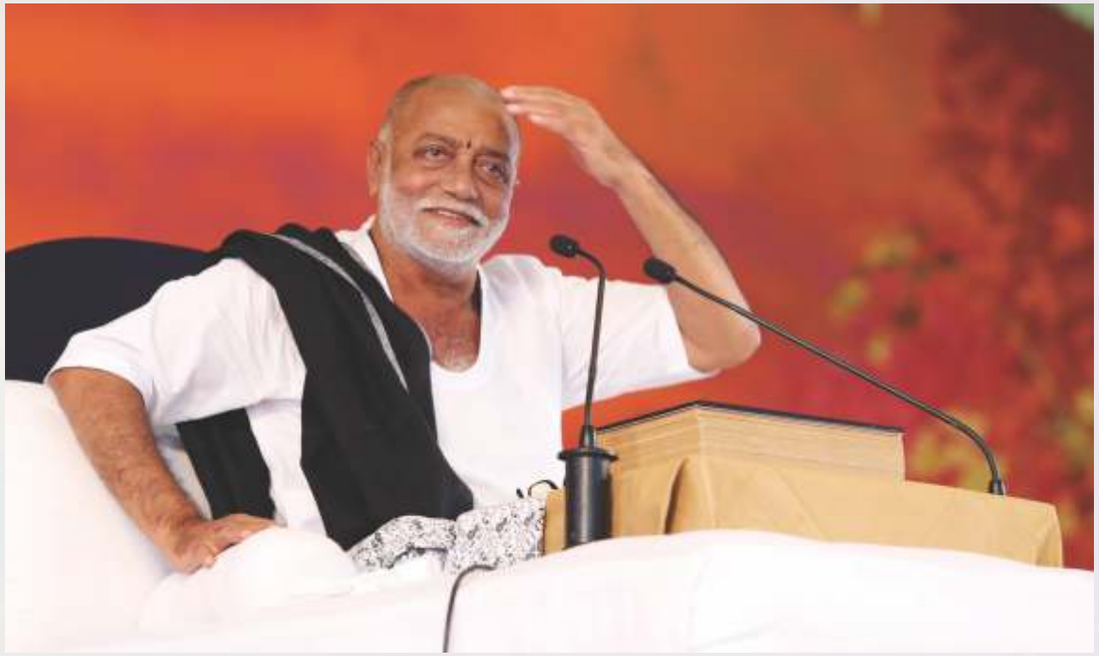

राम ब्रह्म परमारथ रूपा।
अबिगत अलख अनादि अनूपा।।

परमात्मा अनादि है। आदि का अंत होता है पर ब्रह्म अनादि है। अत: 'मानस' में लिखा है कि 'आदि अंत कोई जासु नहीं पावा।' ब्रह्मतत्त्व अनादि है। और 'अनूपा', किसी के साथ उपमा नहीं है। तुलसी कहते हैं, आप उन्हें किसी के साथ नहीं तोल सकते। राम कैसे? तो कहे, राम जैसे। ऐसे विविधरूप राम के 'रामचरित मानस' में तुलसी बताते हैं, वो अनेकरूप से हमें प्रेरित करते हैं। तुलसी ने एक बहुत अच्छी पंक्ति लिखी है -

हरि अनंत हरि कथा अनंता।
कहहिं सुनहिं बहुबिधि सब संता।।

राम स्वयं अनंत है। उनकी कथा भी अनंत है। सुननेवाले, कहनेवाले थकते नहीं।

युवा भाईयों-बहनों, समय मिले तब कथा सुनिए। कथा माने सिर्फ मैंने कही वही नहीं। अच्छी कविता सुननी यह भी कथा है। अच्छा लेख पढ़ना यह भी कथा है। किसी बुद्धपुरुष के पास चूप बैठना यह भी कथा है। कथा के भी अनेक रूप है। भगवान की कथा सुनते ही हम में प्रेम जाग्रत होता है। भगवान को हम अपनी व्यथा सुनाए तो उसके हृदय में करुणा जगे। कथा तो सत्य है ही। यह है सत्य-प्रेम-करुणा। प्रभु की कथा अनेक रूप रूपाय है। तुलसीदासजी अनेक रूप में प्रस्थापित करते हैं। उसी तरह कृष्णकथा है।

जब जदुबंस कृष्न अवतारा।
होइहि हरन महा महिभारा।।

तुलसी ने दो ही पंक्ति म;ह कृष्णचरितगान कर लिया। रति श्रोता है। किसी ने सुंदर विचार प्रस्तुत किए कि रति श्रोता है, क्योंकि कृष्णकथा प्रेमकथा है। प्रेमकथा में रति होनी ही चाहिए। वहां सती नहीं होनी चाहिए। कृष्णकथा रतिवर्धन है। रति वियोगी है। कृष्णकथा वियोग की कथा है। सुंदर विचार है कि कृष्णकथा में श्रोता रति होनी चाहिए। पर वक्ता विरक्त होना चाहिए।

तो कृष्णकथा भी अनंत है। उसी तरह हरि करुणा चरित्र भी अनंत है।

थोड़ा कथा क्रम लें। कल नाम महिमा की बातें की। तुलसीदासजी ने इस शास्त्र के प्राकट्य के बारे में बताया है। यों तो अनादिकाल से भगवान शिवजी ने इस 'रामचरित मानस' की रचना करके अपने मानस में यह कथा रखी है। योग्य समय आने पर कथा पार्वतीजी को सुनाई। वही कथा शिवजी ने कागभुशुंडिजी को दी। उन्होंने गरुड को सुनाई। इसी कथा को याज्ञवल्क्यजी महाराजी भरद्वाजजी के पास गायन करते हैं। गोस्वामीजी कहते हैं, मैंने अपने गुरु से यह कथा सुनी। मेरे मन में यह कथा बैठी नहीं। पर मेरे कृपालु गुरु ने बारबार यह कथा सुनाई। तो मेरे हृदय में यह बात बैठी। संवत् १६३१ को रामनौमी के दिन तुलसीदासजी ने अयोध्या में इसका प्रकाशन किया। कई लोग कथा की आलोचना करते हैं। मैं बिनती करूं, यदि आप वक्ता को सुनना ही नहीं चाहते तो मत जाईए। पर प्लीज़, कथा की टीका मत कीजिए। यह अपराध है। जहां कथा होती है वहां सारे तीर्थ इकठ्ठे होते हैं। कथा रहस्य है। मिस्ट्री है, हिस्ट्री नहीं है।

संक्षेप में जहां सद्कथा हो वहां सुनिए। कुछ नया मिलेगा। यदि ले सके तो। अत: 'कथा क्या सुननी?' यह तर्क बौद्धिक है, हार्दिक नहीं। सत्य बौद्धिक नहीं होना चाहिए, हार्दिक होना चाहिए, बौद्धिक सत्य में खिलवाड होता है। तो बाप, तुलसी कहते हैं, मैंने बारबार भगवद्कथा सुनी। गांठ बांध ली कि मैं इसे ग्रन्थस्थ करूंगा। 'रामचरित मानस' नाम रखा। चार घाट बनाए। ज्ञानघाट पर शंकर पार्वती को, उपासना घाट पर कागभुशुंडि गरुड को कथा कहे। कर्मघाट पर याज्ञवल्क्य भरद्वाजजी को और शरणागति घाट पर तुलसीजी अपने मन को और संतसमाज को कथा कहे। इस तरह कथा रूप का निर्माण हुआ।

हमें तुलसी कर्मघाट पर ले गए। शरणागति से आरंभ होता है फिर भी अकर्मण्यता नहीं। तीरथराज प्रयाग में कुंभमेला है। एक महिने का कल्पस्नान करके संतों ने बिदाई ली। परमविवेकी याज्ञवल्क्य भरद्वाजजी के आश्रम में मेहमान हुए। उन्होंने बिदा मागी तो भरद्वाजजी ने पैर पकड़ कर कहा, 'प्रभु, आप रुक जाइए। मेरे मन में एक संशय है। मेरा संशय यह है कि राम तत्त्व क्या है? जिस राम का गुणगान वेद-उपनिषद करते हैं, अविनाशी भगवान शंकर निरंतर रामनाम जपते हैं, ऐसे रामतत्त्व को मैं नहीं जानता।' याज्ञवल्क्य महाराज मुस्कुराये। प्रसन्नता व्यक्त की कि मुझे आप जैसा प्रपन्न श्रोता मिले तो भगवान की कथा गाने के अवसर पर प्रसन्नता कर आपके सामने कथा का आरंभ करता हूं।

प्रथम रामकथा का महिमा गान किया है। फिर शिवचरित्र से कथा का आरंभ किया है। तुलसी कितना बडा सेतु बनाते हैं! प्रश्न है रामविषयक और उद्घाटन है शिवचरित्र से। हम गलत ही लड़ते हैं! यहां तो सेतु बना है। हे भरद्वाजजी, एक बार कुंभज ऋषि के आश्रम में शिव और सती भगवान की कथा सुनने गए। कुंभज ऋषि ने दोनों का पूजन किया। तब शंकर भगवान ने इसका यह अर्थ निकाला कि भगवान की कथा कहनेवाला कितना विनम्र है! साकेतबासी पंडित रामकिंकरजी महाराज का ऐसा मत है कि कुंभज ऋषि ने दोनों की पूजा की तब शंकर भगवान ने ऐसा अर्थ निकाला कि कथा कहनेवाला कितना विनम्र है! परंतु दक्षकन्या को अपनी बौद्धिकता का अभिमान था। उन्होंने उल्टा अर्थ निकाला। जो घडे में से जन्मा है वह समुद्र जैसी कथा को क्या गायेगा? शिवजी ने परमसुख मानकर कथा सुनी। सती ने नहीं सुनी। इससे ऐसा लगता है, भाग्य में हो तो ही कथाश्रवण सुख मिलता है। श्रवण एक विज्ञान है। श्रवण यह पहली भक्ति है।

शिव और सती कथा सुनकर कैलास जा रहे थे। दंडकारण्य में से गुजरे। राम अवतार था। भगवान वन में थे। सीता का अपहरण हुआ। मानवलीला करते हुए राम रो रहे हैं। उसी समय शिव और सती निकले। शिवजी ने रोते हुए राम को दूर से प्रणाम किए। सती ने देखा कि दो जा रहे हैं। एक की पत्नी का अपहरण हुआ है। दोनों पागल की तरह रो रहे हैं। शिवजी ने प्रणाम किया। बौद्धिक प्रश्न उठा है। शिवजी भावविभोर है। सती के मन में रामतत्त्व को लेकर संशय हुआ है। शिवजी समझ गए। बहुत समाधान किया। पर सती को उपदेश जचा नहीं। उन्होंने बारबार तर्क किए। शिवजी ने सती को स्वतंत्रता दी। परीक्षा करने को कहा। बुद्धपुरुष वह है जो शिष्य पर निर्णय लादता नहीं। मेरे युवा भाईयों-बहनों, ब्रह्म परीक्षा का विषय नहीं है, ब्रह्म प्रतीक्षा का विषय है। थोड़ी समीक्षा करे। लेकिन तत्त्वत: ब्रह्म प्रतीक्षा का विषय है।

सती सीताजी का रूप लेकर परीक्षा लेने का तय करती है। मेरे भाईयों-बहनों, रूप बदल सकते हैं, स्वरूप नहीं। सती का भीतरी रूप नहीं बदला। रूप अनेक पर स्वरूप एक ही होता है। रूप सीमाबद्ध है, स्वरूप कभी भी बूढ़ा नहीं होता। रूप बहिर् है, स्वरूप अंतरंग है। तो सती परीक्षा करती है। राम के ब्रह्मत्व का अनुभव होता है। दौड़ती हुई शिवजी के पास आती है। शिवजी हरिनाम जपते हैं। सती आई। शिवजी ने हंसते हंसते पूछा, आप परीक्षा कर आई? क्या निर्णय हुआ? सती झूठ बोली। आदमी अपनी एक भूल छिपाने के लिए दूसरी कई भूलें करता है। शिवजी ने ध्यान में देखा तो सती ने जो कुछ किया था वह दिखाई पड़ा। शिवजी ने सोचा, सीता तो मेरी माँ है। मेरी पत्नी सीता का रूप ले तो मेरी पत्नी भी मेरी माता समान है। संबंध रखना या नहीं? जल्दबाजी में निर्णय लेना मुश्किल था। उसमें अंत:करण की प्रवृत्ति प्रमाण मानी जाती है। अंदर से आवाज़ आई कि सती का शरीर होगा तब तक उसके साथ मेरा गृहस्थ संबंध नहीं होगा। शंकर भगवान कैलास जाकर आसन जमाकर बैठ गए। शिवजी समाधिस्थ हुए। सत्तासी हजार वर्ष के बाद वे जगे। सती उपाधि में, शिवजी समाधि में। पर वे जगे। 'राम राम' शब्द का उच्चारण हुआ। इसका अर्थ यह हुआ कि समाधि का फल भी रामतत्त्व है। समाधि का सार राम है।

सती शिवजी सन्मुख है। अब तक विमुख थी। दु:ख और वेदना से आदमी सयाना होता है। 'रामायण' का एक सूत्र है, 'सन्मुख होइहि जीव मोहि जबहि।' कोई जीव शिव सन्मुख होता है तो करोडों पापों का नाश होता है। सती के पाप भी नष्ट होते हैं। शिवजी समझ गए कि सती दु:खी है अत: रसप्रद कथाएं कहने लगे। तुलसीदासजी 'रामायण' के मर्मस्थानों पर अंगुलिनिर्देश करते हैं। वे कहते हैं, जीवन में अंधकार हो तो उन्हें राम के सूर्यरूप को देखना चाहिए। भीतरी उद्वेग हो तो राम का चंद्ररूप देखना चाहिए।

बाप, शिवजी रसप्रद कथा सुनाते हैं। उसी वक्त सती के पिता दक्ष सबको यज्ञ निमंत्रण भेजते हैं। शिवजी को निमंत्रण नहीं है। दक्ष बदला लेने हेतु यज्ञ करते हैं। क्या यज्ञ प्रतिशोध या अहंता-ममता के बलिदान हेतु होता है? सती यज्ञ में जाने की जिद्द करती है। शिवजी समझाते हैं। सती नहीं समझती तब शिवजी कहते हैं, 'भले, जाइए।' यह उदार गृहस्थाश्रम का प्रतीक है। सती पिता के यहां जाती है। दक्ष ने उसका मुंह तक नहीं देखा! वातावरण प्रतिकूल लगा। सती क्रोधित हुई। योगाग्नि में जलकर सती भस्म हुई। जलते हुए सती ने ईश्वर से वरदान मागा, मुझे जन्मोजन्म शिव प्राप्त हो। सती का दूसरा जन्म नगाधिराज हिमालय के यहां बहुत बड़ा उत्सव मनाया जाता है। बड़े-बड़े ऋषिमुनि हिमालय के यहां आने लगे हैं। पुत्रीजन्म पर उत्सव मनाइए। बिना बुलाए साधु-संत आपके यहां आयेंगे। पार्वती बड़ी हुई है। नारदजी नामकरण करते हैं। गोस्वामीजी शिवचरित्र कहते हैं।

मानस-रामकृष्णहरि
।। ४ ।।

सेवा का उद्वेश धर्मभ्रष्टता नहीं होना चाहिए

आज भी हररोज के क्रमानुसार जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्र में सेवा दी है ऐसी संस्था और व्यक्ति का सन्मान किया गया। मैं भी प्रसन्नता से धन्यवाद देता हूं। रामकथा के साथसाथ चलता विचारयज्ञ या कोई न कोई विचारशील व्यक्ति अपने विचार कथा के आरंभ में व्यक्त करे उस श्रेणी में बहन श्री काजल ओझा वैद्य, उन्होंने अपने विचार किए। सफाई स्वच्छता अभियान के बारे में उन्होंने सुंदर अभिप्राय दिया। स्वागत करता हूं। मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

राम ब्रह्म परमारथ रूपा।
अबिगत अलख अनादि अनूपा।।

फिर से एक बार कथा के मूल विषय पर आए, 'रामकृष्णहरि।' राम के लिए जो पंक्ति ली है वह है, 'राम ब्रह्म परमारथ रूपा।' रामब्रह्म है वह परमारथरूप है। उनका ब्यौरा नहीं दिया जा सकता। बिना कृपा के उसे कोई जान नहीं सकता। वह अलख है। वह अनादि और अनूप है। मैं सरलता से आपके साथ बात कहना चाहता हूं कि यहां रामजी की बहुत बड़ी पहचान है। राम की ऐसी सरलतापूर्ण व्याख्या पानी मुश्किल है। हम गुरु को ब्रह्मा कहे, 'गुरु माने ब्रह्मा।' ऐसा हम कहते हो तो इसका सीधा अर्थ है कि ब्रह्मा माने गुरु। पानी माने वोटर, तो वोटर माने पानी। गुरु माने विष्णु, तो इसका अर्थ यह है कि विष्णु माने गुरु। गुरु माने शिव तो सीधा अर्थ होता है कि शिवजी माने गुरु। अब यहां लिखा है कि 'राम ब्रह्म' यह जो कुछेक लोगों को आपत्ति है कि राम कोई है ही नहीं! इनके लिए कहता हूं। जिन्होंने गांठ ही बांध ली है वे माननेवाले नहीं है! उनको मनाने का मैंने ठेका नहीं रखा है! आप किस किसको मनाए? कल मुझे प्रदीप ने एक गज़ल दी थी -

एक ही सर है झुका सकता हूं किस किस के लिए,
अनगनित मेरे खुदा और मैं अकेला आदमी।

कतील शिफाईसाहब की गज़ल है -

ये मेरा शहर वफ़ा और में अकेला आदमी।
मेरे लाखों आशना और में अकेला आदमी।

कहने का अर्थ है कि हम कहां सबको समझाने जाय? राम ब्रह्म है ऐसा जिनको मानना ही नहीं है उनके लिए तुलसी ने चौपाई लिखी है। अभी भी अमुक पंथ में ऐसा कहते हैं; एक पंथ के आचार्य ने मुझसे पूछा था, आप राम की कथा

करते हैं तो वह कौन से राम? उन्होंने कबीरसाहब के नाम से पंक्ति कही -

एक राम दशरथ का बेटा एक राम घटघट में लेटा।
एक राम का सभी पसारा एक राम है सबसे न्यारा।

यह कबीर साहब की बात है। कुछेक पंथवाले बिना समझे बात को उठा लेते हैं कि यह तो राम के बेटे हैं, ब्रह्म नहीं है। मैंने इतना ही कहा कि इन सभी में 'एक' शब्द खास लिखा है। इस पर क्यों किसी का ध्यान नहीं जाता? इसमें पहले लिखा है, 'एक' राम दशरथ का बेटा। फिर यूं लिखना चाहिए कि 'दूजा' राम घट-घट में लेटा। फिर लिखना चाहिए कि 'तीजा' राम का सभी पसारा और फिर लिखना चाहिए कि 'चौथा' राम सबसे न्यारा। मूल तो दशरथ का बेटा ही है। तो इस तरह से समझिए कि ब्रह्मा को गुरु कहें तो गुरु ब्रह्मा है। तो 'रामब्रह्म' यहां राम की पांच व्याख्याएं दी है। इस व्याख्या को हम समझ ले तो बेवजह कठिन बातों से बच सकते हैं।

'महाभारत' में ऐसा लिखा है कि कुत्ता और गाय सुगंध से पहचान लेते हैं। ब्राह्मण-समझदार लोग वेद द्वारा सब जान लेते हैं। साधु-संत, ऋषि-मुनि अपनी सम्यक् दृष्टि से सब देख लेते हैं। बाकी लोग कानरूपी इन्द्रियों से सुनते हैं। पाने के मार्ग अलग है। साधु-संतों की रीति से जिन्होंने समझ लिया है उन्हें कठिन नहीं लगता। पर ऐसा कर दिया गया है। राम ब्रह्म है। इसका अर्थ यह हुआ कि ब्रह्म राम है। सूरज 'सन' है, इसका अर्थ है कि 'सन' सूरज है। दूसरा, राम परमार्थ है, इसका अर्थ है कि हम अपनी हैसियत अनुसार छोटा-बड़ा पारमार्थिक काम करे, यह राम है। आप दो गाय का जतन करे यह राम है। आप पांच दर्दी की दवाई दे सके यह राम है। जो भी हमसे परमार्थ हो सके। किसी को अच्छी सलाह दे यह राम है। मैंने कई बार कहा है, आप किसी की सेवा करे यह राम है। मैंने ऐसा समझा है कि चार प्रकार की सेवा करनी चाहिए। आप मान ले यह जरूरी नहीं। पहली, समता रखकर सेवा करे। अपना-पराया नहीं देखना है। सेवा का उद्देश धर्मभ्रष्टता नहीं होना चाहिए। जब सेवा को स्वार्थ और धर्मभ्रष्टता का रूप दिया जाता है तब सेवा गौण बन जाती है। जब सेवा के नाम धर्मभ्रष्टता होती है तब सेवा गौण हो जाती है। उनका उद्देश हो जाता है धर्मभ्रष्टता। आप किसी शिक्षणसंस्था का निर्माण करे तो वहां विद्या देने का लक्ष्य है कि आपको पथ देना है? यह समता नहीं है।

मेरी कुछेक बातें सुदर्शन जैसी लगेगी। एक बात समझ लीजिए, द्वेषमुक्त चित्त से ही उपदेश दे सकते हैं। द्वेषयुक्त उपदेश अपराध है। इसमें मेरा कोई द्वेष चित्त नहीं है। तो अपनी सेवा समतामूलक होनी चाहिए। मुझे सर्वोत्तम शिक्षण संस्थाओं के निर्माण से कोई आपत्ति नहीं है। और फी ज्याता ली जाय उनकी भी कोई आपत्ति नहीं है। पर बच्चों को फ्री रखें। उनकी रुचि अनुसार धर्मपालन करने दीजिए। फी लीजिए पर फ्री रखिए। ऐसा हम नहीं करते तब सेवा का मूल सूत्र समता विकृत होता है। तो सेवा समता से कीजिए। और सेवा ममता से कीजिए। अपने ही हैं ऐसा मानकर सेवा करे। परायापन नहीं होना चाहिए। जिसके जीवन में पहले समता आयेगी ऐसी ममता भी उर्ध्वीकरण करेगी। तीसरा, क्षमता अनुसार सेवा करनी चाहिए। गोविंदकाका अस्पताल बनाए यह उनकी औकात है। हम नहीं बना सकते। पर उसमें दर्दी की दवाई का प्रबंध हम कर सकते हैं। ऐसा भी न कर सके तो एक बार अस्पताल हो आए और दर्दी के कंधे पर हाथ रखकर कहे, घबराना नहीं; तो यह सेवा है। चौथा सूत्र, इतना कुछ करने के बाद अहंकार न आ जाय अत: नम्रतापूर्वक सेवा करनी चाहिए। मेरी व्यासपीठ ने सेवा के वे चार लक्षण तय किए हैं। इस तरह किया गया परमारथ राम है।

राम माने ब्रह्म; ब्रह्म माने राम। राम माने परमारथ; परमारथ माने राम। अब 'अबिगत।' जिसका ब्यौरा न दे सके उसका नाम राम। कौन-सा तत्त्व राम है? किसी अगमतत्त्व की ओर संकेत है। हम चाहे लाख कोशिश करे पर ब्यौरा नहीं दे सकते ऐसे अमुक रहस्यमय तत्त्व जगत में है। ये सभी रामतत्त्व है। 'यह सब कैसे चलता होगा?' इसके जवाब में 'नेति' कहना पड़ा। जग में जिसका पूरा ब्यौरा दे न सको उसका नाम 'राम' है।

आप कोई बुद्धपुरुष लीजिए। सद्गुरु लीजिए। आप जिसे पचासवर्षों से जानते हो फिर भी आप पूरा ब्यौरा न दे सके तब समझना ब्यौरा नहीं दे सकते वह तत्त्व राम है। सभी महापुरुषों का ब्यौरा कहां दिया जा सकता है? ब्रह्म की बात जाने दीजिए। अभी तक हम सोचते हैं कि गांधीजी ने ऐसा क्यों किया? हम इसका ब्यौरा नहीं दे सकते, ऐसी परम व्यक्तियां अथवा तो परमतत्त्व का नाम राम है। फिर 'अलख।' 'लख' माने लिखना और 'लख' माने जानना। पर उसे हम पूरी तरह से जान नहीं सकते। मैं साधु-संतों की व्याख्या करूं फिर यह कहूं कि यह थोड़े संकेत है, इशारे हैं। बाकी साधु-संतों को भी कौन जान सका है? मैंने तो संत की ऐसी व्याख्या जानी है कि जिसे कोई टंटा-फ़िसाद नहीं होता वही संत है। सामनेवाला यदि उसका सिद्धांत स्वीकार न करे तो चूप हो जाय। सिद्धांतों को लेकर क्यों इतना दिमाग खपाते हो? शंकराचार्य के काल में शास्त्रार्थ होते होंगे। यह कलियुग है। शास्त्रार्थ की खास आवश्यकता नहीं है। मनुष्य को अपनी निजता में जाने दो। जो टंटा-फ़िसाद न करे वो संत है।

दूसरा, जिसका अंत आ जाय वह संत नहीं। शरीर न रहे पर उसकी स्मृति ईश्वर को भी रह जाय। वे शायद विरक्त परंपरा में या गद्दी परंपरा में आते हो तो महंत बने, परंतु संतत्व न भूले उसका नाम संत। 'महंत' शब्द खराब नहीं है। शंकराचार्य का दिया हुआ है। मुझे सुरेशभाई दलाल ने पूछा था, 'बापू, आप से अधिक क्लोज़ कौन?' मैंने कहा, मेरा कोई क्लोज़ नहीं है। मेरे पास सब के क्लोज़अप है! साधु को कौन नजदीक, कौन दूर? तो जिसको कोई अंतरंग न हो फिर भी सब अंतरंग महसूस करे।

भगवान राम चौदह साल के बाद अयोध्या आए। सभी चौदह वर्ष से बियोगग्रस्त थे। प्रभु को लगा, मुझे सबसे निजत्व से मिलना होगा, तो, 'अमित रूप प्रगटे तेहि काला।' जैसी जिसकी इच्छा। वैसा प्रभु ने रूप लिया। जब प्रभु सबसे मिलते हैं तब प्रत्येक को अनुभव हुआ कि भगवान सबसे पहले उसे ही मिलते हैं! यही है परमात्मा तत्त्व जिनका व्यक्तिगत कुछ भी नहीं है। ऐसा कोई साधु आपको मिल जाय उसे आप बराबर परखिए कि उनका कुछ भी व्यक्तिगत नहीं है। यह एक प्रामाणिक डिस्टन्स है; तब समझना कि वह तत्त्व राम है।

> सेवा करनी हो तब चार रीति से करनी चाहिए। पहले समता रखकर सेवा करनी चाहिए। इसमें अपना-पराया नहीं देखना है। सेवा का उद्देश धर्मभ्रष्टता नहीं होना चाहिए। जब कोई सेवा के नाम पर धर्मभ्रष्टता करता है, तब सेवा गौण बनती है। आप शिक्षण संस्था का निर्माण करे तो उसमें विद्यादान का लक्ष्य है या कोई पंथ खड़ा करना है? यह समता नहीं है। और सेवा ममता से होती है। अपने हैं, ऐसा मानकर सेवा करनी चाहिए। अन्य दिखाई ही न दे। और जिसमें समता आ जाय उसे ममता बंधनयुक्त नहीं लगती। तीसरा, अपनी क्षमता अनुसार सेवा करनी चाहिए। अपनी औकात अनुसार सेवा करनी चाहिए। और चौथा सूत्र, ये सब करने के बाद अहंकार न आ जाय यों नम्रतापूर्वक सेवा करनी चाहिए।

एक और व्याख्या, जिसकी कोई पंगत न हो वह संत है। पंगत का अर्थ है जिसका कोई ग्रूप न हो। जिसने कोई मंडली नहीं बनाई है। छोटे-छोटे ग्रूप बनने से समाज विघाटित होता है। एयरवोर्ट पर एक भाई ने मुझसे पूछा था क्या आपका कोई ग्रूप नहीं है? मैंने कहा, मेरा कोई ग्रूप नहीं है। मैं हरिनाम लेता हूं। जहां बुलाए वहां जाता हूं। मेरे ब्लड का ग्रूप 'ओ' है। डोक्टरों से सुना है, 'ओ' ग्रूप सब में चलता है। मैं सबके साथ चलता हूं। मैं सबको पसंद करता हूं। मैं जहां-जहां सत्य है, स्वीकार करता हूं। इसीलिए मैं सार्वजनिक रूप से कहता हूं कि मेरा कोई चेला नहीं है, न मैं किसीका गुरु हूं। पूरी दुनिया में मेरे लाखों श्रोता है। यदि मैंने कंठी बांधनी शुरू की होती तो सबको ओवरटेक कर जाता! गुरु होने की कितनी बड़ी जिम्मेदारी है! हमें तो जिनसे सत्य-प्रेम-करुणा सीखे हैं, उनकी मर्यादा भंग न हो इसका जतन कर जीना है। यह भीड़ का मार्ग नहीं है साहब, अकेले जीना है।

तो, मैं संत की व्याख्या करता था। जिन्हें कोई टंटा-फिसाद नहीं, जिनकी विचारधारा अनंत है, जो महंत होने के बावजूद संतत्व नहीं भूले हैं, जिन्हें कोई अंगत नहीं है, न पंक्तिभेद है। साहब, ऐसे आदमी 'अलख' है। पूर्णरूप से पहचाने नहीं जाते। जिन पर हम आवरण डालते हैं। कहते हैं, हमें इनकी पूरी जानकारी है! परंतु कोई जानकारी नहीं होती है! जो ऐसे 'अलख' होते हैं तो उन्हें 'राम' जानिए। ऐसे मूल्य अनादि होते हैं। वे 'अनूपा' है, जिनकी कोई तुलना नहीं है। यह रामब्रह्म की व्याख्या है। दशरथपुत्र राम में श्रद्धा है तो राम उसकी श्रद्धा के लिए ब्रह्म है। वही ब्रह्म राम है। वही राम परमारथ है। वही राम अविगत है। वही राम अलख है। वही राम अनादि है। वही राम अनूपा है। किसीके साथ आप उनकी तुलना नहीं कर सकते। यह राम का वैश्विक रूप है। वेदांत का वाक्य है, 'अहम् ब्रह्मास्मि।' आखिरी सार निकाले तो वेदांत में ऐसा कहा गया है कि मैं ही ब्रह्म हूं। 'मैं ही राम हूं।' ऐसा वेदांत के शिखर पर पहुंचे महापुरुष कहते हैं। बात सही है। प्रत्येक राम है। तुलसी की चौपाई है -

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

तो एक ऐसा तत्त्व जिसे तुलसी 'राम' कहते हैं। जो 'अविगत', 'अलख' है, उसे पूर्णरूप से नहीं जान सकते। अत: अपनी परंपरा में किसी बुद्धपुरुष की जरूरत पड़ती है कि जिसे जान गए हो वो हमें जानकारी दे। अभी मैंने लक्षण गिनाए ऐसा ज्ञाता होना चाहिए।

तो बाप, 'राम' की अनंत व्याख्या 'रामचरित मानस' में इस तरह आई है। 'रामकृष्णहरि' विषय लेकर बोल रहा हूं, थोडी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करते हैं। सबके मूल में एक मात्र सूत्र है, अटूट भरोसा। जिनको अटूट भरोसा होगा वह उसे जान लेगा। भोजाभगत ने कहा है -

भोजल के भरोसो जेने, त्रिकमजी तारशे एने.

अंधविश्वास नहीं, अंधश्रद्धा नहीं। पढ़े-लिखे ज्यादा भरोसा नहीं कर सकते यह पढ़े-लिखे का दुर्भाग्य है! परंतु भोले हृदय के बहुत भरोसा करते हैं, यह इनका बहुत बड़ा सद्भाग्य है। शायद भोले लोगों ने रखे भरोसे की वजह से समाज में उनका शोषण भी हुआ है। लेकिन भरोसे के जगत में हंमेशा निश्चित करना कि मुझे दूसरा ठग गया पर मैंने तो किसी को ठगा नहीं है।

अलियाबाडा संस्था के और सौराष्ट्र युनिवर्सिटी के प्रथम वाइस चान्सेलर डोलर काका मांकड; वे अलियाबाडा आए तब विद्यार्थी झूठ बोलकर छुट्टी ले जाए। एक विद्यार्थी ने आकर कहा, मेरे दादा बीमार है। पांच दिन की छुट्टी चाहिए। उन्होंने दी। महिने के बाद फिर आया कि मेरे चाचा बीमार है। फिर से छुट्टी दी। दूसरे विद्यार्थीयों ने कहा कि चाचा, यह लड़का आपको दो बार ठग गया! डोलर काका ने जवाब दिया, 'वह मुझे ठग गया, मैंने तो उसे नहीं ठगा है।' यह वह कह सके जिसको भरोसा हो। कभी-कभी आश्रित को भरोसा होता है उतना उसके गुरु को भी भरोसा नहीं होता। आश्रित तो कहीं दूर बैठा-बैठा रोता है और उसके काज संवरते हैं। ये बातें बौद्धिक नहीं है। आज के बौद्धिक भी स्वीकार करते हैं कि बुद्धि का अमुक हिस्सा ही काम करता है। बाकी अपना मस्तिष्क बंद रहता है। वह जब खुलेगा तब कितने अगम-निगम के द्वार खुलेंगे! यह जगत ऐसा रहस्यपूर्ण है। ऐसे जगत में भरोसा बड़ी चीज़ है। 'रामचरित मानस' का अकाट्य सूत्र है, 'बिनु बिस्वास भगति नहिं।' तुलसीदास 'विनयपत्रिका' में लिखते हैं -

बिस्वास एक रामनाम को...

भरोसा रखनेवाले को एक दूसरा भरोसा रखना है कि कभी न कभी उसके पास जगह मिल जाएगी। ये विश्वास की बातें हैं। विश्वास हो तो नजदीक बैठने की जगह मिले। बाप, सवाल है भरोसा का! मेरे एक वाक्य में यदि आपको भरोसा है तो आप क्या भजन करते हैं यह महत्त्वपूर्ण नहीं है। भरोसा ही भजन है। माला फेरना ठीक है पर मानव का भीतरी भरोसा यही भजन है। सबसे पीछे भरोसा ही काम करता है। इसलिए भरोसा ही भजन है। विश्वास यदि विश्वास है तो वह अंध होता ही नहीं।

तो बाप, रामकथा में कल तक हम चर्चा करते थे कि सती ने दक्ष के यज्ञ में शरीर जलाकर हिमालय के घर कन्या का रूप लिया। पुत्री जन्म पर ज्यादा उत्सव कीजिए। ऐसा 'रामचरित मानस' का सूचन है। बेटी का जनमते ही गला घोंट देने का काल अंधकार काल था। अब समय बदला है। बेटी का जन्म यह उत्सव का परम हेतु है, ऐसा 'रामायण' स्वयं सिद्ध करता है। पुत्रीजन्म पर हिमालय के यहां ऋषिमुनि आने लगे। पार्वती माने श्रद्धा। अपने जीवन में सच्ची श्रद्धा जगेगी तब बुद्धपुरुष बुलाने नहीं पड़ेगी। वे स्वयं खोजते आयेंगे। 'आदौ श्रद्धा।' पुत्री बड़ी होने लगी। नारदजी आए। उन्होंने हिमालय से कहा, 'राजन्! आपकी पुत्री के अनेक नाम है - उमा, अंबिका, शैलजा, भवानी, पार्वती, दुर्गा। और आपकी यह पुत्री ऐसे पतिव्रतधर्म की आचार्य बनेगी कि जगत में आपका नाम रोशन करेगी। हस्तरेखा देखकर ऐसा कहा। हस्तरेखा भविष्य बताती है, कपालरेखा भूतकाल बताती है। पर सबसे अच्छी बात कि हमारे पांव की रेखा वर्तमान बताती है कि पांव कहां पर पड़ते हैं। नारद ने भविष्य बताया। पार्वती को पति कैसा मिलेगा इसका नारद ने थोड़ा वर्णन किया है -

अगुन अमान मातु पितु हीना।
उदासीन सब संसय छीना।।

'हिमालय, आपकी पुत्री को अमान पति मिलेंगे, जिनके माता-पिता नहीं होंगे। वह उदासीन रहता होगा। उनके सभी संशय क्षीण होंगे। वह विश्वास का प्रतीक होगा, जोगी होगा, निष्काम होगा। आपकी पुत्री की हस्तरेखा में ऐसा लिखा है।' माता-पिता रो पड़े! उनकी आंख में आंसू आ गए। उमा को प्रसन्नता थी कि जो लक्षण बताए हैं वे शिवजी के है। मैं शिव को ही प्राप्त करना चाहती हूं। माता-पिता से स्वीकृति लेकर पार्वती ने तप शुरू किया।

'रामायण' में लिखा है कि पार्वती ने बहुत तप किया। शरीर सूख गया। फिर आकाशवाणी हुई, 'हे हिमालयपुत्री, आपको भगवान शंकर प्राप्त होंगे। माता-पिता के बुलावे पर तप छोड़कर घर जाना।' इस ओर भगवान शंकर, सती के जल जाने के बाद अकेले घूम रहे हैं। बाद में ध्यान में बैठ जाते हैं। यहां पार्वती भगवान रामजी-शिवजी सन्मुख प्रकट होती है। पार्वती का स्वीकार होने को है। शिवजी ने अपने प्रभु के आदेश को शिरोधार्य किया। जिसके लिए व्रत करते हो वह तत्त्व ही हमें यों कहे कि अब ऐसा करो तो ऐसा करना चाहिए। आप उपवास रखकर गुरु के घर जाय और वे कहे, भाई, प्रसाद ले लो। तो मेरी व्यक्तिगत सलाह है कि प्रसाद ले लेना। गुरु ने आपको प्रसाद की ओफर की वही आपके व्रत का फल है।

बीच में ताड़कासुर आया। उसके आतंक से मुक्त होने के लिए सभी देवताओं ने शिवजी की समाधि तोड़ने की योजना बनाई। कामदेव ने अपनी माया का विस्तार किया। काम बहुत बड़ी शक्ति है। उसकी उपेक्षा नहीं हो सकती। दंताली के स्वामी सच्चिदानंद, उन्होंने

अपने एक ग्रंथ में लिखा है कि काम से मुक्त होने के लिए तीन प्रकार के उपाय इतिहास में बताए है। समाज के एक वर्ग ने 'यह पाप है, यह अपराध है', ऐसा बताकर काम के ऊर्जा की निंदा की है। फिर दूसरा थोड़ा संयमी वर्ग आया और कहा, भाई, काम का स्वीकार तो करना ही पड़े। एक वस्तु आप समझ लीजिए साहब, जनमते ही काम की ऊर्जा होती है। यह दूसरा वर्ग गुरु सेवन करते-करते संयमी बनकर काम के ऊपर नियंत्रण करने लगा। श्रेष्ठ उपाय है -

राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा।
थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा।।

मेरा तुलसी कहता है कि राम के भजन बिना किसी का काम नष्ट हुआ है? तुलसीदास ने 'मानस' में अद्‌भुत कामदर्शन करवाया है। बहुत प्रेक्टिकल है। हम बातें करें कि काम से यों...! बाकी बहुत कठिन मामला है। जिसका रामभजन ज्यादा होगा उसे भी तकलीफ होगी। रामभजन की तीव्रता होगी तो भी काम प्रबल होगा पर रामनाम के कारण पतन नहीं होगा।

स्वार्थी देवताओं ने चालाकी से भगवान शिव के आगे ब्याह का प्रस्ताव रखा। शिवजी ने कहा, मेरे हरि की आज्ञानुसार मैं ब्याह करूंगा। गणों ने शिवविवाह की तैयारी शुरू की। जटा, भस्म, सर्प, मृगचर्म आदि का शृंगार सजा है। देवता भी तैयार हुए हैं। भूतप्रेतों को देखकर स्वागत समिति के सदस्य बेहोश हो गए। आखिर में शिवजी ब्याह के मंडप में आए। महारानी मैना शिव का प्रोक्षण करने आती है। महादेव का रौद्र रूप देखकर हाथ से आरती की थाली गिर गई! नारदजी ने महारानी मैना को कहा, देवी! अब भ्रान्ति छोडिए। आप जिसे पुत्री कहती है वे आपकी पुत्री नहीं है, वे अखिल ब्रह्मांड की माँ है। आपने जिनकी उपेक्षा की वे महादेव शिव और यह शक्ति है। मेरा इतना ही कहना है कि अपने यहां शिव आए हैं। अपने घर में पुत्री के रूप में कोई शक्ति होती है। नारद जैसा सद्‌गुरु समझ दे तभी पता चलता है। नया भाव जगा है। मंडप के द्वार पर शिवजी का प्रोक्षण हुआ। एक के बाद एक आचार्य विवाह विधि शुरू करवाते हैं। आखिर में महादेव ने पार्वती का पाणिग्रहण किया।

कन्याविदाय का समय आया है। हिमालय स्थिरता का प्रतीक है। पर आज वे भी शिथिल है। मेरी समाज से प्रार्थना है कि जो माँ-बाप पुत्री को इतनी ममता से आपके घर भेजते हैं तब उसके माँ-बाप से भी सौ गुना अधिक प्रेमभाव देना। उसकी मानसिकता ऐसी बना देना कि उसे अपना पिता याद न आए। तो बाप, कन्याबिदाई है। माँ-बाप ने बेटी को क्या उपदेश दिया है -

करेहु सदा संकर पद पूजा।
नारिधरमु पति देउ न दूजा।।

माता-पिता ने कहा, बेटी, शंकरपद की पूजा करना। नारी का धर्म है कि उसका पति ही उसे इष्ट है। अपना समाज बहुत ही सुंदर काम करता है। जब कोई पिता अपनी बेटी के हाथ पीले न कर सके अथवा तो आज के खर्चे में टूट जाय तब अपने यहां जो समूह विवाह की प्रथा शुरू हुई है यह भी एक उपकारक घटना है। कोई भी संपन्न आदमी सभी पुत्रियों को अपनी पुत्री मानकर कन्यादान करे यह देशकालानुसार उपकारक घटना है।

हिमालय की पार्वती बिदा लेती है। देवतागण कैलास पहुंचे। शिव-पार्वती का गायन करके देवता अपने-अपने लोक में लौटे हैं। इस ओर शिव-पार्वती का नित्यनूतन विहार है। समय बीता। पार्वती ने पुत्रजन्म दिया। कार्तिकेय का जन्म हुआ। कार्तिकेय ने ताड़कासुर नामक राक्षस को मारकर देवताओं को विश्राम दिया। तुलसीदासजी ने यों शिव-पार्वती की कथा गाई। एक बार शिवजी कैलास के वेदविदित वटवृक्ष के नीचे अपने हाथों से आसन बिछाकर बैठे हैं। उचित अवसर देखकर पार्वती आती है। पार्वती रामतत्त्व के बारे में प्रश्न पूछती है। इसके जवाब में भगवान शंकर राम की कथा का आरंभ करते हैं। यह कथा हम कल लेंगे।

मानस-रामकृष्णहरि
।। ५ ।।

मंदिर अपना गौरव है पर इसमें स्पर्धा नहीं होनी चाहिए।

आज मंच से बारडोली स्वराज संस्था का सन्मान हुआ। मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। समर्थ इतिहासविद्‌ और मिलों के पैदलयात्री और अनेक यात्रा करके जिन्होंने इतिहास के तथ्यों को समाज के सामने रखने का प्रामाणिक प्रयत्न किया है, ऐसे अपने समर्थ इतिहासविद्‌ साहित्यकार आदरणीय नरोत्तमबापा की हमने वंदना की। उपनिषद कहते हैं, 'युवा स्यात्‌ साधु, युवा अध्यापक:।' साधु युवा होना चाहिए। अध्यापक युवा होना चाहिए। आचार्य युवा होना चाहिए। शरीर की बात गौण है। अपने विचार से, चिंतन से अपनी प्रस्तुति से। हमारे गौरवमय युवावक्ता जयभाई ने समय मर्यादा में अपने विचार प्रस्तुत किए। स्वागत कर प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। व्यासपीठ से मैं आप सब को प्रणाम करता हूं।

अपनी कथा का मूल विचार 'मानस-रामकृष्णहरि' है। तीन पंक्तियां लेकर हम इस पर संवाद कर रहे हैं। हमारा तात्त्विक अनुसंधान राम से है। आज रामजन्म तक कथा भी ले जानी है। चर्चा के साथ प्रवाह भी आगे बढ़ायेंगे।

राम ब्रह्म है। ब्रह्म मानी परमारथ। परमारथ मानी ब्रह्म। स्वअर्थ करना यह ब्रह्म नहीं है। दूसरों के लिए कुछ कर गुज़रना यह ब्रह्म है। बहुत सरलता से, जल्दी पहुंच में आ जाय ऐसे ईश्वर की बात है। यह पहुंच में आये ऐसा वेद है। हम अपने निजी अर्थ निकालते हैं। इसमें मोरारिबापू कहे वही सही ऐसा नहीं। हमारी सनातन परंपरा है कि एक ही सत्य को अनेक ढंग से कहना। हमें लगे कि यह मेरा है पर वह जितना हमें अपना लगे इतना ये सब को अपना लगे ऐसा शास्त्र है। यहां जो रामतत्त्व की चर्चा हो रही है, वजह यह है कि हमें अपना राम दिखाई पड़े, हमारी पहुंच में रहें। राम मानी? मंदिर में जो है वह राम तो है ही। मंदिर या मूर्ति की आलोचना मत करना। अवतारों की परंपरा में अन्य अवतार तो थोड़े समय के लिए आये, उनके बहुत मंदिर नहीं है। मंदिर में पूर्णावताररूप से सुंदरतम छबिरूप धारण करता प्रथम अवतार राम का है। फिर कृष्ण भगवान आते हैं। फिर बुद्ध आते हैं। यह पूरी परंपरा है। यदि हम सत्य के उपासक हैं, कनिंग नहीं हैं तो राम केन्द्र में होने चाहिए। राम मूल में है। रामतत्त्व केन्द्र में हैं। हमें एक ही सत्य में से अनेकरूपेण अपने राम पहुंच में रहेंगे। तुलसीदासजी कहते हैं, 'राम ब्रह्म परमारथ रूपा।' स्वार्थ हेतु किया कार्य राम नहीं है। परमार्थ हेतु किया हुआ कार्य राम है जो पहुंच में है।

मंदिर में तो राम होने ही चाहिए। केन्द्र में ही होने चाहिए। या तो राम को स्थापित न करे। रामकृष्ण ठाकुर के मंदिर में शारदा माँ होती ही है। ठाकुर भी होते है। पर अन्य को गौण मत बनाइए। या तो आप अपने इष्ट को ही स्थापित कीजिए; जहां आप की श्रद्धा है वहां अपने इष्ट को स्थापित करने के बाद फिर जो मूल धारा है उन्हें आप

साईड़ में कैसे करे! हृदय से सोचिए, सूर्य का स्थान जहां है वहीं शोभा देता है।

मेरा कहना है कि मैं केवल राम मंदिर तक कथा को मर्यादित नहीं करता। मेरे एक युवा, भाई राकेश ने ड्राइव करते हुए मुझे पूछा, 'बापू, मंदिर के बारेमें आप का क्या ख्याल है?' मेरा जवाब है कि मंदिर चार प्रकार के होते हैं। पर मेरे कथन से सहमत होने की आवश्यकता नहीं है। बुद्ध हंमेशा कहते थे, 'मैं राजापुत्र, बहुत बड़े शाकल्यकुल में जन्मा हूं। यह देखकर मुझ से सहमत मत होईए। पर मेरी बात में आप के जीवन का सत्य लगे तो ही मानियेगा। इसमें मुझे बुरा नहीं लगेगा। मंदिर की मेरी परिभाषा आप को मान लेने की जरूरत नहीं है कि मोरारिबापू ने कही है। आप अपनी स्वतंत्रता का सदुपयोग कीजियेगा। मैं आप को बिलकुल मुक्त रखना चाहता हूं। धर्म के आदेश जब बंधनरूप बन जाय तब मुझे ठीक नहीं लगता। धर्म का आख़िरी लक्ष्य मोक्ष है, मुक्ति है, स्वतंत्रता है। हम जिसे धर्म मानते हैं वे सब छोटे-छोटे रूप हैं। धर्म मानी गगन सिद्धांत। धर्म मानी सत्य, प्रेम, करुणा।

तो, कितने सारे मंदिर है! मंदिर होने चाहिए लेकिन मंदिरों का अतिरेक नहीं होना चाहिए। टूटे हुए हो तो उसका जीर्णोद्धार होना चाहिए। मंदिर अपना गौरव है। परंतु स्पर्धा नहीं होनी चाहिए। केन्द्र में अपने श्रद्धा के देव को रखे और फिर आदि-अनादि देव को आसपास नौकर की तरह न रखे! यह तो सब को इक्कठा कर देने की होशियारी है! लोग तो भोले हैं। लोगों को धर्म का सच्चा स्वरूप समझाईए। आप से दबे युवा, आप के तथाकथित धर्मगुरुओं ने बताये भय और प्रलोभन से दबे पढ़े-लिखे युवा कन्फ्यूझ रहते हैं। गुरु ऐसा खोजो कि वह आपको सत्य कहे और मीठी बोली में सत्य कहे।

तो बाप, मुझे मंदिर की परिभाषा पूछी। मैंने कहा कि मंदिर की महिमा है। अतिरेक नहीं होना चाहिए। मंदिर के चार प्रकार है। आप सोचियेगा, मेरी बात से सहमत नहीं भी हो सकते। एक मंदिर तीर्थों में होता है। जैसे काशी, अयोध्या, हिमालय, बदरीनाथ, केदारनाथ। पर क्या हम तीर्थों के मंदिर में बार-बार जा सकते हैं? एक मंदिर अपने गांव का होता है। बाहर से आए लोग गांव के मंदिर में ही ठहरते थे। अपनी सभ्यता और गांव के मंदिरों ने सब को आश्रय दिया है। तीर्थ के मंदिर में रोज न जा सके। गांव के मंदिर में रोज जा सकते हैं। और रोज न भी जा सके। दबाव डाला जाता है कि मंदिर रोज जाना चाहिए! यह दबाव हिंसा है। दबाव नहीं होना चाहिए। आप प्रेम कीजिए, वे दौड़े-दौड़े आयेंगे। नदी पर किसी समुद्र ने दबाव नहीं किया था। आप उदार बनिए। आप के प्रेम की लहरें ऐसी होनी चाहिए कि सरिता को आने के लिए पत्र न लिखना पड़े कि आप आईए। यह कथा राजकीय रेल नहीं है, जहां ट्रक भर-भर कर आदमी लिए जाय। यह तो प्रेम प्रवाह है। जहां उदारता और प्रेम देखेंगे तो लोग आयेंगे ही। मुझे कई लोग कहते हैं, आप व्यासपीठ पर से श्रोताओं को 'यार' क्यों कहते हैं? मैंने कहा, 'मैं अपने श्रोताओं से दूर जाना नहीं चाहता।'

तीसरा मंदिर घर में होता है। श्रद्धावान व्यक्ति अपने घर में एक मंदिर रखता है। घर के मंदिर में घर के सदस्य रोज प्रणाम करते हैं। हमें इन तीनों मंदिरों के पास जाना पड़ता है। कोई भी मंदिर हमारे पास नहीं आता। एक मंदिर ऐसा है कि जो हमारे साथ हंमेशा रहता है और वह है 'दिल एक मंदिर।' मैं इसे मंदिर के साथ जोड़ता हूं। यह मेरा कोई वाक्विलास नहीं है। अन्य मंदिरों की महिमा है। पर हम मूर्ति लाए, आचार्य प्राण प्रतिष्ठा करे तब उसमें प्राण आए। इसकी महिमा है। लेकिन बाहर से लाई मूर्ति प्रतिष्ठित करनी पड़े। 'भगवद्गीता' में लिखा हैं-

इश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारुढानि मायया।।

प्रत्येक हृदय के मंदिर में ईश्वर स्वयं है, इसकी प्रतिष्ठा किसी आचार्य ने नहीं की है। किसीको मंदिर

बांधने का कोन्ट्राक्ट नहीं दिया गया है। अंदर का मंदिर स्वयंभू है। ईश्वर स्वयंभू रीति से बिराजमान होते हैं। अन्य मंदिर महान है पर मूल मंदिर को मत भूलिये। एक युवा मुझे पूछता है, बापू, रोज मंदिर जाने की ईच्छा नहीं होती पर दबाव आता है कि जाना चाहिए, तब क्या करना चाहिए? मैंने कहा भीतरी मंदिर में स्थित ठाकोरजी ऐसा कहे कि मैं यहां हूं, मैं वहां भी हूं। समय हो तो मिल आओ।' उस दिन जाना। किसी भी प्रकार का बंधन हिंसा है। धर्म का चुनाव हर आदमी का स्वतंत्र होना चाहिए।

तो, राम ब्रह्म है। वह ब्रह्मतत्त्व मानी परमार्थ। दूसरों के लिए कुछ करना। ऐसा परमार्थक कार्य राम है, ऐसा तुलसी ने कहा है। तुलसी दूसरी पंक्ति में राम की व्याख्या करते हैं-

सकल बिकार रहित गतभेदा।
कहि नित नेति निरूपहिं बेदा।।

राम कौन है? राम वह तत्त्व है जो सकल विकार से मुक्त है। छः विकार प्रधान है। षट् विकार- काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर। राम कौन है? जो षट् विकार से मुक्त है। यदि ऐसी षट्विकारमुक्त व्यक्ति मिले तो समझना कि वह राम है। पर ऐसी व्यक्ति मिलनी मुश्किल है। संतों के लक्षण में ऐसा लिखा है कि 'षट्विकार जीत' संत ने छः विकार जीत लिए हैं। जीतने और रहित होने में फ़र्क है। आदमी किसी युद्धकेदी को बंद कर दे तो भी वह कब दीवाल तोड़कर भाग निकले, कुछ कहा नहीं जा सकता। जिसने षटविकार जीते हैं उसे बांधकर संयम की कोठरी में डाल दिये होंगे पर वृत्ति कब भड़क उठे कुछ कह नहीं सकते! तुलसी ने कहा, परम तत्त्व क्या है? 'सकल बिकाररहित' है। 'जीत' नहीं, 'रहित।' इससे वह मुक्त है। उसमें वह है ही नहीं। खारे पानी में घास नहीं उग सकती। रेत में जहाज चले नहीं। जीतना और रहित होना अलग-अलग बस्तु है।

ईश्वर छः विकारों से मुक्त है। प्रत्येक विकार का जो रस है वह रस ईश्वर में दिखाई देता है। आप को कान बदलकर अलग ढ़ंग से सुनना पड़ेगा। हमारे यहां कहते हैं कि भाई फल की आशा न रखना। कृष्ण कहे तो हमें मानना ही चाहिए। फल की आशा नहीं रखनी चाहिए। फलप्राप्ति हेतु हम जो काम करते हैं उसमें रस रखें इसका हमें अधिकार है कि नहीं? गोविंदकाका के यहां एक लड़का हीरा घिसे तो उसे हीरा मिलनेवाला नहीं है। पर उसे हीरा बनाते समय रसपूर्वक हीरा के साथ काम लेना यही उसकी भक्ति है। मैं गाऊं तो मुझे गाने का रस मिलना चाहिए, फल मिले या ना मिले इसकी चिंता मुझे नहीं होनी चाहिए। रस लो भक्ति है। 'रामायण' क्या है? 'छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस', एक ज्यूस है। कृष्ण रसरूप है।

मुझे यह कहना है, परमात्मा राम विकाररहित है। छः विकार में पहला विकार काम है। राम काम रहित है। पर रसरहित नहीं है। राम रसिक है। लक्ष्मणजी बाहर गये हैं तो चित्रकूट की तलहटी में स्फटिक शिला पर जानकीजी को बिठाकर मर्यादा न टूटे इस तरह बिना सुई धागे के एक सलाई लेकर फूलहार बनाकर राम जानकीजी को पहनाते हैं। यह 'रामायण' में लिखा है। मेरा राम रसिक है। सुंदर कपड़े पहनो; इसमें लिखा है, 'प्रभु प्रसाद पट भूषण धरहि', भगवान का प्रेमप्रसाद मानकर सुंदर आभूषण पहनिए, ऐसा लिखा है। रसहीन वक्ताओं ने ऐसी बातें बताई ही नहीं। कई बार समाज साधु-संतों को सहज रहने नहीं देता, 'आप को ऐसा ही रहना है!' यार, साधुसंतों को पता है, उत्तम अवस्था किसे कहे? 'उत्तमा सहजावस्था।' सहजावस्था जैसा उत्तम आसन कोई नहीं है। क्या मैंने आप को कभी कहा है कि आलथी पालथी लगाकर ही बैठे। आप बीच में खड़े मत होईए। कभी भी प्रतिबंध नहीं लादा है। आदमी को स्वाभाविक रूप से बैठना चाहिए। सहज रहो, यार! यह कोई मेरी देन नहीं है। 'रामायण' में लिखा है। भगवान शंकर कथा कहने बैठे तब, 'बैठे सहज ही संभु कृपाला।'

सहज रूप से उन्हें ठीक लगा वैसे बैठे। समाज महात्माओं को सहज साधना नहीं करने देता! भगवान राम काम से मुक्त है पर रसमुक्त नहीं है। हमें भी काममुक्त रहना है पर रसमुक्त नहीं रहना है। राम का दूसरा स्वरूप क्रोधमुक्त का है। पर उनको बोध यह है कि कभी नकली क्रोध करना भी पड़े। दूसरों के निर्वाण के लिए राम क्रोध करते हैं। तुलसी ने लिखा है, दूसरों के लिए वे क्रोध करते हैं।

तो, भगवान में काम नहीं, पर रस है। क्रोध नहीं, पर बोध है। भगवान में लोभ नहीं, पर क्षोभ है। क्षोभ विकार नहीं है। क्षोभ किसे होता है? जिसमें संवेदना हो। एक आदमी पीड़ित को कुछ कहे; दूसरी ओर आदमी के पास काफी कुछ हो पर लोभी हो और थोड़ी-सी समझदारी आये, अवसर चुक जाय फ़िर उसे क्षोभ हो कि खर्च करने का अवसर था पर मैं चुक गया! 'चिड़िया चुग गई खेत।' यह क्षोभ जरूरी है। तो लोभ नहीं, पर क्षोभ है कि ये मैं इसे दे नहीं सका। इतना कुछ देने पर भी मेरा राम क्षोभित होता है। जो समृद्धि शंकर भगवान ने रावण को दी वही समृद्धि भगवान राम ने विभीषण को दी तब क्षोभ के साथ दी, 'अरर्र! मैंने इसे कुछ दिया नहीं!' यह क्षोभ है।

राम में ऐसी संवेदना है। राम में मद नहीं है। सच्चे राम उपासकों में भी मद नहीं होता। अहंकार नहीं होगा। रामोपासक साधु के नाम में आत्माराम होता है; इसका अर्थ यह कि वह राम है, पर कोई उसे 'राम' कहते हैं इसका उसे मद नहीं है। उसे पता है कि हमारे कुल में 'रामदास' नाम भी होता है। तू आत्माराम है पर तू रामदास भी है। अत: अभिमान को अवकाश नहीं रहता। राम और सत्य। राम में मद नहीं पर सद्तत्त्व है। मोह नहीं पर नेह है। राम में प्रेम है। प्रेम मुक्त रखे, मोह बंधन में डाले। 'मत्सर' का अर्थ ईर्ष्या, द्वेष है, जो राम में नहीं है पर राम के हृदय में सब के लिए करुणा है, कृपा है।

जिसमें काम न हो पर रस हो, क्रोध न हो पर बोध हो, लोभ न हो पर संकोच और संवेदन हो, मद न हो पर सत्य का आग्रह हो, मोह न हो पर नयन नेह से भरे हो, जिसके जीवन में ईर्ष्या-द्वेष दिखे नहीं ऐसी व्यक्ति को पहुंच में आया राम समझिये। मंदिर में बिराजमान राम तो राम ही है पर अभी हस्तगत राम की जरूरत है। तुलसी दूसरी पंक्ति में कहते हैं-

सकल बिकार रहित गतभेदा।
कहि नेति नेति निरूपहिं बेदा।।

साक्षात् वेद 'नेति नेति' कहकर जिसका निरूपण करते हैं वह परमतत्त्व राम है। अब यदि ऐसा कहने में आये कि ऐसा परम तत्त्व राम धरती पर क्यों आये? इसका स्पष्टीकरण है-

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरितधरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल।।

यह परमारथरूपी ब्रह्म धरती पर क्यों आते हैं? भगत, भूमि, भूसुर, सुरभि और सुरहित इस पांच के कारण प्रभु मनुष्य शरीर धारण करते हैं और मनुष्य चरित्र अदा करते हैं, जिसे देख-सुनकर मानव का विषाद नष्ट हो जाय। ईश्वर 'भगत' के लिए आता है। 'भगत' मानी प्रेमी। जहां प्रेम हो वहां प्रभु हाज़िर होते हैं। पूजापाठ हो वहां प्रभु आये या नहीं यह निश्चित नहीं है, पर प्रेम हो वहां आते ही है, आते ही है, आते ही है। यह पहुंच के अंदर के राम है। परमात्मा आते हैं इसका दूसरा कारण पृथ्वी है। धरती पर अत्याचार हो, पर्यावरण के प्रश्न उत्पन्न हो, चारों ओर से हिंसा भभक उठे ऐसे समय परमात्मा किसी न किसी रूप में, कोई न कोई विचार लेकर धरती पर जन्म लेते हैं। 'भूमि' का अर्थ धीरज भी होता है। साधु-संतों की धीरज देखकर वे आते हैं। 'भूमि' का अर्थ क्षमा भी होता है। अखंड क्षमा के यज्ञ जिसके जीवन में होंगे ऐसे क्षमाशील महापुरुषों के लिए प्रभु पधारते हैं। यह हस्तगत राम है।

'भूसुर' मानी पृथ्वी के देवता। ब्राह्मण देवता जो ब्रह्म जैसा चरित्र रखते हैं। इतनी ऊंचाई मिली हो फ़िर भी छोटे से छोटे आदमी को सन्मान दे ऐसा ब्राह्मणत्व है। अब तो ठीक है कि दलित के घर भी कोई प्रसंग हो तो पूजापाठ करने जाते हैं। नरसिंह मेहता भी गये थे ना? यही होना चाहिए। पृथ्वी के देवताओं के लिए राम आते हैं। 'सुरभि' माने गाय। गायों के लिए प्रभु आते हैं। उस समय का पृथ्वी का अर्थतंत्र गाय पर आधारित था। तो अर्थतंत्र के लिए हरि पधारते हैं। दैवी समाज, देवताओं की मुश्किलीओं को दूर करने के लिए परमात्मा कृपा कर धरती पर आते हैं। नर चरित्र करते हैं। मानवी की जगजाल मिटती है।

ऐसे राम को तुलसी ने ब्रह्म कहा है। प्रभु की कृपा से ऐसा सोचे तो राम और रामकथा हस्तगत में रहती है। बाप, ठीक वक्त पर कर ले वही सयाना है। तुलसी का यह सत्य वैज्ञानिक है। इसमें लिखा है, ऐसे राम की नरलीला जो सुनेगा उसके जगत का जाल कटेगा। ऐसा हो या न हो पर कथा के नौ दिनों में तो सांसारिक उपद्रवों से छूटकारा मिलता है। कथा के समय

में तो ये उपद्रव छूट ही जाते हैं। तुलसीजी ने ऐसे रामतत्त्व का निरूपण किया है। भगवान शंकर ने रामकथा वटवृक्ष के नीचे पार्वती सन्मुख शुरू की है।

ठाकुरजी का अद्‌भुत स्वरूप है। पार्वती ने योग्य समय देखकर शिवजी को प्रणाम किया। महादेव से कहा, 'मैंने गत जन्म में रामलीला देखी तो भ्रम हुआ और आप ने मेरा त्याग किया। प्रभु, अभी तक मेरे मन से यह भ्रम नहीं गया है कि राम सचमुच ब्रह्म है कि मानव है?' भगवान शंकर ने पार्वती का प्रश्न सुनकर अपने इष्टदेव को मन ही मन याद करके भवानी समक्ष बोलना शुरू किया, हे देवी! आप धन्य है। आप ने समग्र लोक को पवित्र कर दे ऐसी गंगा जैसी रामकथा पूछी है। आप रामकथारूपी गंगावतरण की भगीरथ बनी है। देवी! आप परोपकारी है। जिस ब्रह्म को सीतावियोग में रोते देख आप को भ्रम हुआ यह ब्रह्म क्या है यह मैं बताता हूं। ब्रह्मतत्त्व वह है जो बिना पांव चले, बिना हाथ कर्म करे, बिना तनु सब का स्पर्श कर सके। बिना कर्ण सुन सके, बिना जिह्वा बोल सके, बिना नाक गंध ले सके। ऐसे जिनके लक्षण है यह तत्त्व ब्रह्म है। रामतत्त्व कार्य-कारण से पर है। फिर भी 'रामायण' में पांच कारणों की चर्चा की है। जय-विजय को मिला शाप, सती वृंदा को मिला शाप, नारद का शाप; मनु-शतरूपा को मिला वरदान और राजा प्रतापभानु को मिला शाप।

'मानस' में उल्लेख है कि प्रतापभानु दूसरे जन्म में रावण बनता है। अरिमर्दन कुंभकर्ण बनता है। दूसरी माता की कूख से जन्मा भाई धर्मरुचि विभीषण होता है। आप को पता है कि रामकथा में राम के जन्म से पहले रावण के जन्म की कथा लिखी है। पहले रात फ़िर दिन होता है। रावण ने प्राप्त वरदानों का दुरुपयोग किया है। समस्त जगत त्रस्त है। गाय के रूप में धरती, ऋषिमुनि, देवता और ब्रह्मा परब्रह्म की पुकार लगाते हैं। देवताओं ने परमात्मा ने पुकारा, इस प्रसंग पर मेरी व्यासपीठ हंमेशा कहती है कि परमतत्त्व को पाने के लिए तीन पायदानें, आराम-विराम-विश्राम के लिए तुलसी यहां तीन पायदानें बताते हैं। किसी भी समस्या के आगे घुंटने न टेक कर पुरुषार्थ कर लेना चाहिए। देवता और धरती ने बहुत पुरुषार्थ किया कि रावण के आतंक से मुक्त हो जाय। पर आख़िर मानवीय पुरुषार्थ की भी सीमा होती है। पुरुषार्थ की सीमा आने पर पुकार करनी होती है। फिर प्रार्थना का दौर शुरू होता है। पर पुरुषार्थ बगैर की प्रार्थना कितनी सफल होगी? पुकार के बाद प्रतीक्षा। साधना कर ली अब प्रतीक्षा करनी है।

आवशे, ए आवशे, ए आवशे।
तू प्रतीक्षामां अगर शबरीपणुं जो लावशे।

-कृष्ण दवे

> मंदिर में तो राम होने ही चाहिए। केन्द्र में ही होने चाहिए। या राम को स्थापित नहीं करने चाहिए। रामकृष्ण ठाकुर के मंदिर में शारदामाँ होती ही है। ठाकुर होते ही है। लेकिन अन्य को गौण नहीं बनाते! या तो आप अपने इष्ट को अकेले बिठाइए। आपकी श्रद्धा है वो इष्ट को केन्द्र में स्थापित करने के बाद जो मूलधारा है उन्हें आप साइड में कैसे रख सकते हैं! सूरज जहां है वहीं उनकी शोभा है। केन्द्र में अपने श्रद्धा देव को रखे, फिर आदि-अनादि देव को नौकर की तरह आसपास न रखे! यह तो सबको इकट्ठा करने की होशियारी है! लोग तो भोले हैं। लोगों को धर्म का सच्चा रूप समझाइए। आप से दबे हुए युवा, तथाकथित धर्मगुरुओं ने बताए हुए भय और प्रलोभन से दबे हुए पढ़े-लिखे युवा कन्फ्यूझ रहते हैं।

आकाश में से आवाज़ आई कि धैर्य रखिये। मैं वचनबद्ध हूं। रघुकुल में मनुष्य जन्म धारण करूंगा। तुलसी हमें अयोध्या ले जाते हैं। रघुकुल का शासन है। वर्तमान राजाधिराज दशरथजी है। उनका परिचय दिया। दशरथ में तीनों योग है। उपासना योग, कर्मयोग; ज्ञानयोग। कौशल्यादि प्रिय रानियां है। पवि! आचरण करती है। पति को अनुकूल हो ऐसा जीवन जीती है। मेरे युवा भाईओं-बहनों, तुलसीदासजी कथित राम का प्रागट्य कर सके ऐसी एक छोटी-सी फार्म्यूला यहां बताई है। राम आराम-विश्राम-विराम रूप में आये ऐसी ईच्छा रखते हो तो ऐसा दाम्पत्य होना चाहिए। तुलसीदासजी तीन सूत्र देते हैं। एक, दशरथजी रानिओं को प्रेम करते हैं। दूसरा, रानियां दशरथजी को आदर देती हैं। तीन, समय मिलने पर दोनों साथ मिलकर हरिभक्ति करते हैं। मेरे युवा भाईओं-बहनों, अपने घर में रामतत्त्व का प्रागट्य करना हो तो दिव्य दाम्पत्य के लिए तीन वस्तु याद रखिए। पुरुष स्त्री से प्रेम करे क्योंकि स्त्री प्रेम की भूखी होती है। पुरुष अहंकारी होता है तो स्त्री उसे आदर दे। समय मिले तो दोनों हरिभजन करे।

दशरथजी का दिव्य दाम्पत्य जीवन है पर पुत्र नहीं हैं। जगत को तकलीफ़ हो तो राजा के पास जाय पर राजा को तकलीफ हो तो वह कहां जाय? तुलसी ने राजमार्ग दिखाया कि गुरुद्वार जाये। अपने गुरु के पास दशरथजी आये हैं। बाप, कहीं से भी समाधान प्राप्त न हो तो एकाद जगह ऐसी रखना जहां जाने से समाधान मिल जाये। दशरथजी ने अपनी व्यथा वशिष्ठजी को सुनाई। पुत्रकामेष्टि यज्ञ हुआ। यज्ञपुरुष हाथ में प्रसाद का चरु लेकर यज्ञमंडप से बाहर आए। वशिष्ठजी ने राजा को प्रसाद देते कहा, यथायोग्य रूप से रानिओं में बांट दीजिए। प्रसाद का आधा हिस्सा कौशल्याजी को दिया। आधे के दो हिस्से कर पाव हिस्सा कैकेयी को दिया। पाव के दो हिस्से कर कौशल्या और कैकेयी के हाथों से सुमित्रा को दिया।

भगवान कौशल्या के गर्भ में पधारे हैं। ईश्वर उर में भी निवास करते हैं और उदर में निवास करते हैं। दिन बीतने लगे। शगुन होने लगे। परमात्मा प्रागट्य का समय नजदीक आने लगा। पंचांग अनुकूल हुआ। सर्वत्र हर्ष छाया। तुलसीदासजी ब्रह्म प्रागट्य का आनंद व्यक्त करते हैं। त्रेतायुग है। चैत माह तिथि नवीं, मंगलवार, अभिजित नक्षत्र, भगवान सूर्य मध्य में आये हैं। पूरा अस्तित्व प्रसन्न है। देवतागण आकाश में से परमात्मा की गर्भस्तुति करते हैं। माँ कौशल्या का महल आलोकित हो गया।

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

साक्षात् परमात्मा चतुर्भुज विग्रह लेकर प्रगट हुए हैं। माँ को अद्‌भुत रूप देखकर ज्ञान हुआ। संत लोग मानते हैं की फिर माँ ने मुँह फेर लिया। माँ ने कहा, प्रभु, आपने मनुष्यरूप में प्रगट होने का वचन दिया था। आज आप नररूप में नहीं, नारायणरूप में आए हैं। मुझे ईश्वर मनुष्य के रूप में चाहिए।' माँ के आग्रह से प्रभु नवजात मानवशिशु का रूप धारण करते हैं। भाईओं-बहनों, यह भक्ति की पराकाष्टा है। ज्ञानमार्ग में जीव को विकसित होने के लिए उपर चढ़ना पड़ता है। भक्तिमार्ग में ईश्वर को जीव की ईच्छानुसार छोटा बनना पड़ता है। भगवान कौशल्या की गोद में आये; रोने लगे फिर तुलसी ने घोषणा की-

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।।

विप्र मानी धर्म, धेनु मानी अर्थ, सुर मानी काम, संत के लिए प्रभु ने अवतार लिया। परमात्मा के रोने की आवाज़ सुनकर रानियां भ्रम के साथ दौड़ आई! दशरथजी ब्रह्मानंद में लीन हो गये हैं। वशिष्ठादि संतों ने निर्णय किया है कि साक्षात् ब्रह्म मानवीय लीला करने हेतु बालक के रूप में जन्मे हैं। दशरथजी सुनते ही परमानंद में डूब गए। समग्र अयोध्या में बधाईयां शुरू हो गई है। सुरत के तापी तट से 'रामकृष्णहरि' शीर्षक अंतर्गत इस कथा में आप सब को रामजन्म की बधाई हो।

कथा-दर्शन

धर्म हंसता हुआ होना चाहिए। धर्म आखिरी आदमी का सन्मान करता हुआ होना चाहिए।
कलियुग नाम की महिमा की मौसम है।
मानव का भीतरी भरोसा यही भजन है।
रामनाम सांप्रदायिक नहीं है।
गुरु का गुणधर्म ही देखना चाहिए, गणवेश नहीं।
शस्त्र या शास्त्र से मत डरना।
शास्त्र से डरना मत। शास्त्रों के लगत अर्थ निकाले उनसे डरना।
लोभ या भय से धर्म का आचरण हो ही नहीं सकता।
तथाकथित धर्म ही ग्लानि उत्पन्न करते हैं।
जिस वस्तु के पठन से आपकी आंख नम हो जाय वह वेदपाठ है।
हम परस्पर विशुद्ध प्रेम में जीने लगे तो सारी समस्याओं का अंत आ जाय।
प्रेम मुक्त रखे, मोह बंधन में डाले।
भक्त और प्रेमी एक अवलंबन चाहते हैं।
छोटे से छोटे आदमी तक पहुंचने का शिवसंकल्प विष्णुपूजा है।
विरति मानी दूसरों के लिए त्याग करने की रुचि।
दु:ख और वेदना से आदमी सयाना होता है।
सत्य बौद्धिक नहीं होना चाहिए, हार्दिक होना चाहिए।
सत्य व्यक्तिगत हो सकता है। प्रेम परस्पर होना चाहिए। करुणा व्यापक होनी चाहिए।
सुधारने की ममता छोड़ दे, सभी को स्वीकारने का परमधर्म अपनाइए।
स्पर्धा सुख दे सके, विजय पताका फहरा सके पर भीतरी शांति न दे सके।
हम रहते हैं बड़े कमरे में पर अंदर से बहुत संकीर्ण है!

मानस-रामकृष्णहरि
।। ६ ।।

कृष्ण की रासलीला विश्व को प्रेमाद्वैत का अद्‌भुत वरदान है

कथा का मूल विषय 'मानस-रामकृष्णहरि' है। कल हमने भगवान राम की जन्मकथा संक्षेप में गाई। दूसरी पंक्ति में 'कृष्णचरित मानस' की बात कही कि इसमें कृष्णचरित्र भी है।

जब जदुबंस कृष्न अवतारा।
होइहि हरन महा महिभारा।।

तुलसी ने दो पंक्ति में थोडी कृष्णचरित्र की बातें लिखी है। यों तो समग्र कृष्णचरित्र इसमें आ गया। 'श्रीमद्‌भागवत' में रामचरित्र संक्षेप में है। तो 'कृष्णचरित मानस' यह भी 'रामायण' का विषय है। शिवजी ने कामदेव की धर्मपत्नी रति के आगे यह कथा गाई है। भगवान कृष्ण का चरित्र अनंत है। 'हरिवंशपुराण' देखे। 'श्रीमद् भागवत' तो कृष्णचरित्र है ही। कृष्णचरित्र का अधिक आस्वाद करना हो तो 'महाभारत' देखना पड़े। 'महाभारत' कृष्णचरित्र का महाकोश है। 'महाभारत' पर काफी काम हुआ है। होना ही चाहिए।

युवा भाईयों-बहनों को मैं प्रार्थना करूंगा कि संपूर्ण 'महाभारत' आपके मोबाईल में इन्टरनेट द्वारा समाविष्ट है। थोड़ा समय मिले तब धीरे-धीरे दो-पांच श्लोक पढ़ेंगे तो आपको काफी प्रेरणा मिलेगी। अपने यहां गलत मान्यता आ गई थी कि 'महाभारत' घर में नहीं रखनी चाहिए। क्योंकि घर में 'महाभारत' रखने से घर में 'महाभारत' होती है! यदि आप नहीं रखते तो क्या घर में 'महाभारत' नहीं होती? 'महाभारत' रखियेगा। शस्त्र या शास्त्र से मत डरना। यदि आपके पास करुणा है तो शस्त्र नहीं डरा सकता। गांधी के पास करुणामूलक हिंसा थी अत: उन्हें शस्त्र डरा न सके।

दे दी हमे आज़ादी बिना खड़ग बिना ढाल।
साबरमती के संत तुने कर दिया कमाल।

शास्त्र से डरना मत। शास्त्रों के लगत अर्थ निकाले उनसे डरना। शास्त्रों की मूल वस्तु को अपने हेतु के तोडमरोड डाले ऐसे आदमियों से डरना चाहिए। साहब, शास्त्रों के मूलरूप को विकृत मत कीजिए। आपको इसमें भाष्य जोड़ने हो तो अपने नाम से जोड़ियेगा।

शास्त्रों ने अद्‌भुत काम किया है। मैं यह भी कहता हूं कि देशकालानुसार कोई वस्तु अनुचित लगे तो संशोधन होना चाहिए। एक समय ऐसा कहा जाता था कि बहनों को यज्ञोपवित का अधिकार नहीं है। बहनें यज्ञ नहीं कर सकती। ऐसा था। पर वंदन करके उसका विशुद्धिकरण भी हो सकता है। मुझे हंमेशा यह प्रश्न रहा है कि मेरे देश की बहनों को अमुक अधिकार क्यों नहीं है? मुझे तो ऐसा लगता है, बहनों को यज्ञ करने की जरूरत ही नहीं है। अधिकार है पर जरूरत नहीं है। वह चूला जलाकर बच्चों के लिए, परिवार-अतिथि के लिए रोटी बनाती है। इससे बढ़कर और कोई यज्ञ नहीं है, साहब! बहनें वेद नहीं पढ़ सकती! ऐसा कहा गया है, पर सुधार होने चाहिए। वह नौ माह गर्भ में रखकर, बच्चे को जन्म देकर पलने सुनाकर, छोटी-सी डोर हाथ में लेकर लोरी सुनाए यही उसका वेद है। अमुक वस्तु का संशोधन होना चाहिए। शास्त्र गुरुमुखी होने चाहिए।

तो, 'महाभारत' रखिए, समय मिलने पर एक-दो श्लोक पढ़िए। फिर समझ में न आए तो गलत अर्थ न निकाले ऐसे किसी बुद्धपुरुष से मिलिए। गांधीजी कहते थे जिनके घर में 'रामायण'-'महाभारत' न हो उनको हिन्दुस्तानी कहलाने का अधिकार नहीं है। आप 'रामायण' न पढ़े पर आपके घर में रहे तो भी समझने का कि आपके घरमें कोई बिराजमान है, जो आपका ख्याल रखता है। मैं तो अनुभव कर चूका हूं साहब कि गुरुकृपा से हम सद्‌ग्रंथ रखे और हमें सो जाए तो भी हमें पता न चलें यों सद्‌ग्रंथ हमारे घर की रखवाली करते हैं। यह अंधश्रद्धा की बात नहीं है। मेरे कुछेक अनुभव की बात है। भरत को पादुका दी तो उसने क्या किया? समस्त अयोध्या सो जाती थी तब यह पादुका घूमफिर कर पूरी अयोध्या की रक्षा करती थी। आपके गुरु की कोई एक चीज आपके घर में हो तो वह आपकी रक्षा करती है। उर्दू में कहावत है, 'महबूब की हर चीज महबूब होती है।' कृष्ण ने राधाजी को मुरली दी फिर राधाजी को कृष्ण की जरूरत न रही। श्रीकृष्ण ने उद्धवजी को निर्वाण के समय पादुका दी तो सर्वस्व दे दिया।

मैंने वर्गीकरण किया है। कथा में कई बार कहता हूं। कृष्ण धराधाम छोड़ कर गए। यह बात मुझे जचती ही नहीं पर कृष्णचरित्र में यह कहना पड़ता है। वह चला जाय यह बात पसंद ही नहीं आती। पांच हजार वर्ष हो गए, फिर भी उनका नाम लेकर जी रहे हैं। कृष्ण ने किस-किस को क्या दिया यह देखना चाहिए। दिया तो उसने सबकुछ दे दिया। राधा को बांसुरी दी। कहते हैं कि राधा ने मांगकर ले ली। या तो कृष्ण ने दे दी। उद्धव को पादुका दी। सुदामा को सख्य दिया, श्रीदामा को जन्मभर का दारिद्र दिया। दारिद्र भी प्रभु का वरदान है। ईश्वर प्रदत्त होना चाहिए। नंद-यशोदा को केवल आंसू दिए। वे पूरी जिन्दगी रोते रहे। मेरे युवा भाईयों-बहनों से प्रार्थना करता हूं कि आपको समय मिले तब आपकी आंख में आंसू आ जाय ऐसी व्यक्ति के पास चौबीस घंटे में से पांच मिनट अवश्य जाईए। यही दर्शन है। जिस वस्तु के पठन से आपकी आंख नम हो जाय वह वेदपाठ है। जिसके स्पर्श से हृदय में भाव जगे ऐसे आदमियों से मिलिए बाप, ताकि हमारी आंख गीली हो।

नंद-यशोदा को आंसू दिए। गोपिका को तीव्रतम विरह दिया। इस योगेश्वर ने 'श्रीमद् भगवद्‌गीता' जैसा महागीत अर्जुन को दिया। किसी को बांसुरी, किसी को आंसू, किसी को दारिद्र दिया। किसी को गीता दी। कृष्ण ने मीरां को अपनी आवाज़ दी। कहा, तू गाती रहना। यह मानव सब छोड़ता गया। कृष्णलीला

को तीन हिस्सों में बांट सकते हैं। मैं दो दिन कृष्ण पर बोलूंगा। यह मेरा अपना कृष्ण होगा। सबका अपना-अपना कृष्ण होना चाहिए। पर याद रखिए कृष्ण होना चाहिए।

मैं कृष्ण को तीन रूपों से कहना चाहता हूं। एक, कृष्ण की रामलीला। है कृष्ण, पर मैं नाम देता हूं रामलीला। दूसरा, कृष्ण की रासलीला। तीसरा, कृष्ण की राजलीला। मेरी व्यासपीठ का कृष्ण तीन हिस्से में है। मैं 'रामलीला' शब्द इसलिए प्रयुक्त करता हूं, क्योंकि कृष्ण ने बलराम के साथ लीला की है। बलराम और कृष्ण में बहुत प्रेम है। मतभेद भी बहुत है। बलरामजी बड़े हैं फिर भी कृष्ण कहे उसे मान्य रखते हैं। कृष्ण का कहा कौन न माने? जिसका नसीब फूटा हो वह न माने! वे ऐसी बातें करे, कृष्ण नर्क में जानेवाले हैं! विनोबाजी ने ठीक कहा था, तथाकथित धर्म ही युद्ध करवाते हैं। 'मेरी बात सच, आपकी झूठी। यह देव गलत है इनको हथियार उठाने पड़े थे। कृष्ण ने तो ऐसा कर डाला था।' ये सब भेडों को पढ़ाने की बाते हैं! बच्चों को शिक्षित होने दो। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि अभी मुझे थोड़ा आयुष्य देना ताकि मैं थोड़ा काम करता जाऊं। मुझे मरना नहीं, जीना है। मैं आप सबको कहता हूं, मरने का तो विचार भी मत करना। जिन्दगी जीने जैसी है। मूलतत्त्व को जो अन्याय होता है यह भ्रामकता टूटनी चाहिए। तथाकथित धर्म ही ग्लानि उत्पन्न करते हैं।

मैं कृष्ण को तीन रूपों में देखना चाहता हूं। एक, रामलीला उनकी दाउदादा के साथ की लीला। उनके कितने सुंदर पद मिलते हैं वैष्णव परंपरा में! कृष्ण की निर्दोष बाललीला, बलराम के साथ की लीला! दोनों के बीच में कई मतभेद है। पर वे कृष्ण को बहुत मानते हैं। कई व्यक्तित्व ऐसे होते हैं कि दुश्मन को भी प्रेम करना पड़े। 'महाभारत' के युद्ध की बात आई तब दुर्योधन के प्रति पक्षपात तो था ही। बलरामदादा ने दुर्योधन को गदायुद्ध सिखाया था। युद्ध तय हुआ तब बलरामजी को कहा कि आप को रहना ही पड़ेगा। तब बलरामजी को हुआ कि मैं पांडवपक्ष में न रह सकूं और कौरव पक्ष की ओर भी न रह सकूं क्योंकि यह अधर्म का मार्ग है। आप जानते हैं कि युद्ध के समय वे यात्रा पर निकल गए तटस्थ रहने के लिए। मानव स्वभाव है तो उड़ती ख़बरे मिलती हैं। दाऊ की आंख में आंसू तब आए जिस दिन ख़बर मिली कि 'महाभारत' युद्ध में कर्ण का निर्वाण हुआ! कृष्ण का दिया पीतांबर ओढ़कर दाउदादा ने कर्ण का मरसिया गाया! कर्ण के जाने पर सूर्य के घर प्रार्थना सभा हुई। उस दिन सूर्य तपा नहीं। उस दिन तापी रोई होगी। सूर्यनगरी गीली हुई होगी। किंवदन्ति अनुसार सुरत की इस भूमि पर उसका अग्निसंस्कार हुआ होगा।

आज सुरत में इतना दान कर्म दिखाई देता है कयोंकि इनके जिन्स में कहीं कर्ण बैठा है! कितना हो रहा है! पर मैं दाताओं को सचेत कर दूं कि कोई मेरा नाम लेकर डोनेशन के लिए आए तो झांसे में मत आईयेगा। सीधा मुझ से पूछियेगा। कहीं मेरे नाम पर प्राईवेट प्रेक्टीस शुरू न हो जाये! 'अर्थ'; आप को पता है 'महाभारत' में अर्थ के कितने अर्थ होते हैं! एक श्लोक प्रक्षेप है पर बहुत लोकप्रिय है। 'अर्थो पुरुषस्य दासः।' यह श्लोक भीष्म ने कहा है। शैल्य, द्रोण, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, यों एक श्लोक चार जने बोले हैं। पुरुष अर्थ का दास है। भीष्म ने श्लोक में कहा, 'आप क्यों उस दिन बोले नहीं?' तो कहा कि पुरुष अर्थ का दास है। मैंने अन्न खाया है। मैं आप से पूछता हूं, 'यह भीष्म किसीका

गुलाम हो सकता है? यह बात गले नहीं उतरती। इस आदमी का ब्रह्मचर्य कटिबंध है। मैं अपनी बात बीच में डालूं तो आत्मश्लाघा हो जायेगी। पर मुझे स्पष्टता करनी है कि आप से कोई यों कहे कि मोरारिबापू पैसे का दास है तो क्या आप विश्वास करेंगे? साहब, कोई भी न मानें। मैं आप के पैसों की खातिर नहीं आता। मैं अपने प्रारब्ध की रोटी साथ लेकर निकला हूं।

अर्थ के ग्यारह अर्थ है। वहां किस अर्थ में वाक्य कहा गया होगा? इसका गुरुकृपा से विचार होना चाहिए। 'अर्थ' का एक अर्थ संबंध है। पुरुष संबंध का दास है। यह संबंध की मज़बूरी है। अर्थ का एक अर्थ समय है। हम कहते हैं, मानव कालाधीन है। अर्थ का एक अर्थ उद्वेग है। कभी-कभी उद्वेग हमें दूसरों के आधीन कर देता है। बहुत उद्वेग होता है तब हम किसीके पास जाते हैं और वह जो कहे करते हैं। अर्थ का एक अर्थ घटना है। और एक अर्थ संपत्ति है, पैसा नहीं। संपत्ति आसुरी और दैवी दो प्रकार की होती है। आदमी दोनों का दास है। पैसा खराब नहीं है। वेद कहते हैं,आप दोनों हाथों से खूब कमाइए। यह वेद आज्ञा है। वेद की एक दूसरी आज्ञा भी है, आप दो हाथ से कमाकर चार हाथों से खर्च कीजिए।

इस जगत में गुरुकृपा से जितने वितरण करने चले, समाज ने उन्हें बेच दिया है! विदेश में एक जगह कहीं मेरी तस्वीर की निलामी हो रही थी। मैं कथा में जाउं इससे पहले निलामी हो जाये चंदा इक्कठा करने के लिए! दो-तीन दिनों के बाद कथाप्रेमीओं ने कहा कि बापू, यह हमें पसंद नहीं है। पर ये सब बड़े हैं तो हम कुछ बोल नहीं सकते! फ़िर मुझे पक्की जानकारी मिली। मैंने दो-तीन मुखिया से कहा, यह ठीक नहीं है। मैं इतना सख्त न बोलूं। मेरा स्वभाव नहीं है, पर जाने क्यों उस दिन कह बैठा 'मेरी निलामी कर डालो!' फ़िर सब दुःखी हुए। माफ़ी मांगी। मैंने कहा, 'रूपये इकठ्ठा करने में कुछ विवेक तो रखिए!'

तो कृष्ण की रामलीला। मैं बलरामजी को याद करता था। उनके साथ की कृष्ण की लीलाएं यह रामलीला है। कृष्ण ने सब को सब दिया। जब महाप्रयाण का समय हुआ, यादवास्थली हुई तब कृष्ण को लगा धरती का बोझ बढ़ गया है और उसे उतारने मैं यहा आयां हूं। मेरा परिवार भी बोझ बन गया है, यह करुणा है! मेरा यदुकुल भी धरती का बोझ बन गया है! मुझे उतारना चाहिए। योजना बनती है। द्वारिका में तो प्रस्ताव पारित कर द्वारिका की सीमा में सोमरस पर प्रतिबंध हो गया था। फ़िर भी यादव के शाहजादे पीते थे! कृष्ण को लगा ये सब बोझ बन गए हैं, परस्पर कट मरेंगे। और अंत में कृष्ण को भी जाना है। ये सभी कृष्ण और बलराम भगवान सोमनाथ के द्वार सोमतीर्थ आते हैं। महादेव की पूजा होती है। सोमनाथ काल देवता है। सोमनाथ की त्रिवेणी का जल लेकर दोनों भाई अभिषेक करते हैं। पुनः कहूं, राम को मानिए, कृष्ण को मानिए पर गलती से भी शिव का अपराध मत करना। जिसे भी मानिए आप को मुबारक। माता-देवी-जगदंबा का अपराध मत करना। दुर्गा का अपराध मत कीजिए। दुर्गा की ही गरबी होती है। दुर्गा को केन्द्र में रखकर रास होते हैं। सब कितना बदला जा रहा है! धर्म की ग्लानि होती जाती है! एसे विकृत विचार की स्थापना करनेवालों को आईना देखने की मेरी प्रार्थना है, कितने विकृत दिखते हैं! धर्म की आभा मिटती जाती है।

महादेव का अभिषेक हुआ। पूजारीजी ने शिवलिंग के बिल्वपत्र-फूल भगवान कृष्ण के हाथ में दिए हैं। सोमेश्वर भगवान से प्राप्त नमन कृष्ण के हाथों में हैं।

कृष्ण ने बलरामजी की आंखों का स्पर्श करवाया। दाउ की आंखें भर आई। बलराम जान गए हैं कि बस अब थोड़ा समय बाकी है। शिव और कृष्ण को भेट कर नियति की ओर गति करते हैं। भगवान श्री कृष्ण प्राची के पीपल के नीचे आकर पूरे जीवन की थकान उतारते हैं यों पैर पर पैर चढ़ाकर बिराजमान है। जरा नामक पारधि आता है। कृष्ण के रक्तिम तलुए को देखकर तीर मारता है। मैंने

दो-तीन कथाओं में कहा था कृष्ण को निर्वाण देने हेतु यह बाण छाती में, गले में, नाभि में भी लगाया जा सकता था परंतु जरा का बाण कृष्ण के चरण में ही जाता है। इसका अर्थ यह है कि बाण हो या वाणी कृष्ण के चरण में ही जाना चाहिए। ये राधाकृष्ण भगवान हमारे इष्टदेव है, ऐसा सहजानंद भगवान ने कहा। सहजानंद स्वामी ने कितना बड़ा उपकार मंत्र दिया कि 'राधाकृष्ण भगवान हमारे इष्टदेव है। हम उनके हैं।'

मुझे तीन कोण से कष्ण देखने हैं। कृष्ण की एक रामलीला। दूसरी लीला है रासलीला। रासलीला अद्‌भुत है! यह प्रेमलीला है। भक्ति की लीला है। रासलीला ने हमारे अंत:करण को पवित्र रखने का पुण्य कर्म किया है। कृष्ण ने रास में जो स्टेप्स लिए, मुद्राएं बताई, यह कोई सामान्य मानव नहीं कर सकता। परमसत्य ही टिक सकता है। कृष्ण का रास कैसा होगा कि पांच हजार वर्ष हो गए तो भी हम घूमते रहते हैं! कच्छ का थारो भगत रोते-रोते कह गया-

श्याम विना व्रज सूनुं लागे...

कृष्णलीला अद्‌भुत है! ऐसे भाव के साथ मैं ये पंक्तियां सुनाऊं तो क्या गलत है?

याद कर तुने कहा था प्यार ही संसार है,
हम जो हारे दिल की बाजी, ये तेरी भी हार है।

कल मुझे एक युवक ने पूछा था, प्रेम क्या है? मैंने कहा, प्रेम मानी भक्ति; भक्ति मानी प्रेम। हम बात-बात में 'प्रेम' शब्द का उपयोग करते हैं। यह प्रेम नहीं है। लड़के-लड़कियां सभी लिखते हैं, 'आई लव यु।' मुझे समझ में नहीं आता! 'लव' में 'आई' भी नहीं होना चाहिए और 'यु' भी नहीं होना चाहिए। जहां 'आई' बैठा होता है, क्या वहां भक्ति हो सकती है? 'आई' हंमेशा

केपिटल होता है। प्रेम हो वहां 'यु' भी नहीं होना चाहिए। वहां कोई दूसरा नहीं होता, एकत्व होता है। अपने यहां 'अद्वैत, शुद्धाद्वैत, द्वेताद्वैत-कितने मत आये! मेरी व्यासपीठ ने तो बहुत ही नम्रता से कहा था कि हमारा सिद्धांत प्रेमाद्वैत है। अन्य सिद्धांत अद्‌भुत है। 'मानस' में तो अलग-अलग स्थान पर स्वीकृत हुए हैं। यह तो प्रेमाद्वैत की बात है। जहां 'आई' निकल गया, मैं निकल गया और तूं भी निकल गया। तुलसीदासजी स्पष्ट कहते हैं कि जहां 'मैं' हूं, 'तू' है वहां प्रेम होता है। वहां माया होती है।

मैं अरु मोर तोर ते माया।

यह सत्संग प्रेमाद्वैत का प्रतीक है। भक्ति की बात है।

तुम मेरे पास होते हो, कोई दूसरा नही होता...

कृष्ण की रासलीला यह विश्व को प्रेमाद्वैत का अद्‌भुत वरदान है। हम परस्पर विशुद्ध प्रेम में जीने लगे तो कितनी सारी समस्याओं का अंत आ जाय! कृष्ण की रासलीला अद्‌भुत है! रासलीला के तो कितने प्रकरण है! उसमें गोपीओं को ही जाने का अधिकार है या तो व्यक्ति को गोपीभाव में आना पड़ता है। व्यक्ति स्वयं प्रेमरूपा बने तो वहां प्रवेश मिले, ऐसा आचार्यों ने कहा है। मैंने कईबार कहा है, नारद गोपी है। ये सब प्रेमाद्वैत के अवतार है। शंकर गोपी है, चैतन्य महाप्रभुजी गोपी है। कबीरसाहब के कुछेक पदों को देखकर लगता है, कबीरसाहब भी गोपी है।

कृष्ण की रासलीला प्रेम की पराकाष्ठा है। इसलिए ब्रजबासी प्रेम में डूबे हैं, उन्हें चैन नहीं है! भीतरी अद्वैत है, लेकिन बहिर्‌ता की भी महिमा है, इसलिए भक्तों ने गाया कि 'श्याम विना व्रज सुनुं लागे...।' आप कल्पना कीजिए। पांच हजार वर्ष पहले कृष्ण ने अपना शरीर छोड़ा होगा तब दुनिया की कैसी दशा हुई होगी! अभी भी सौराष्ट्र-कच्छ के आदमीओं ने कहां शोक छोड़ा है? अभी भी काले कपड़ें पहने हैं! मैं तो कहूं बाप, समय मिलने पर कृष्ण भजिए, महादेव को भूलिए मत। राम ब्रह्म है, कृष्ण ब्रह्म है, शिव ब्रह्म है। मूल में ये सभी प्रगट ब्रह्म है। इनसे ही हम उजले हैं।

मेरी व्यासपीठ की दृष्टि से तीसरी लीला कृष्ण की राजलीला। इससे बढ़कर कोई नहीं। कृष्ण की रासलीला देखनी हो तो 'श्रीमद् भागवत' में जाना पड़े। कृष्ण की रामलीला देखनी हो तो भी 'भागवत' में या 'हरिवंश पुराण' में जाना पड़े। कृष्ण की राजलीला सब से ज्यादा 'महाभारत' में प्रगट है। यह मानव अद्‌भुत है! संपूर्ण है। मूल 'महाभारत' में कृष्ण का प्रवेश द्रौपदी के स्वयंवर में होता हैं। दुनियाभर के राजा द्रुपदकन्या को प्राप्त करने आए हैं। साहब, द्वारिका से रथ आया है। इस मानव के चेहरे पर सदैव स्मित रहता है। मेरी तलगाजरडी आंखों ने तीन प्रसंग देखे 'महाभारत'में जब कृष्ण के चेहरे पर स्मित नहीं था। इनमें से एक प्रसंग जब अश्वत्थामा ने द्रौपदी के पांच पुत्रों की हत्या कर दी और आश्वासन देने कृष्ण आते हैं। मुझे इस मुद्दे पर संकेत देना है कि जब सभी खिसक जाते हैं तब कृष्ण द्रौपदी से मिलते हैं और क्षणभर के लिए जीव को परम पर संशय होने में देर नहीं लगती! भजन करनेवालों को बहुत सतर्क रहना है। एक चिनगारी कब विश्वास की गंजी को जला डालें कह नहीं सकते! पांच पुत्रों की मृत्यु हुई। रोष तो था ही। द्रौपदी कृष्ण को जरा आक्रोश में पूछती है कि 'महाभारत' में किसे, कब, कहां मारना इसकी योजना का दौर तुम्हारे हाथ में था; सखा, इन पांच बालकों को मारने की योजना तुम्हारी तो नहीं थी न? उस वक्त कृष्ण

की आंख में आंसू आ गए। कुछ बोले नहीं। मन ही मन द्रौपदी को प्रश्न पूछा कि तुझे भी मुझ पर संदेह हुआ है? तुझे भी मुझ पर भरोसा न रहा? नौसो निन्यानबें में से एक भी साड़ी याद न आई? साहब, किसी बुद्धपुरुष को यकीन हो कि मुझ में उजाला ही है और उस पर जब अपनी ही व्यक्ति ऐसा आरोप लगाए तब वेदना अवर्णनीय होती है!

पथिक तुं चेतजे, पथना सहारा पण दगो देशे,
धरीने रूप मंझिलनुं, उतारा पण दगो देशे।

- नाज़िर देखैया

कब किसको शक हो जाय निश्चित नहीं है! आसुरीवृत्ति बहुत बलवान होती है, यह नियम है, इसलिए देवता और असुरों के युद्ध में ज्यादा हार देवताओं की हुई है।

कृष्ण का प्रथम प्रवेश द्रौपदी के स्वयंवर में होता है। साहब, यह तो योगेश्वर कृष्ण है। सन्मान हुआ। राजा-महाराजा खड़े हो गए। सब का अभिवादन सस्मित स्वीकार मध्य आसन में बिराजमान है। पर कृष्ण की आंखें किसीको खोजती है। आप कल्पना कीजिए, पूरी दुनिया कृष्ण को खोजे पर कृष्ण किसीकी राह देखते हैं, उस व्यक्ति के भाग्य कैसे होंगे! देखा कि कोई पांच आ रहे हैं। धनंजय अर्जुन को देखकर शाता हुई कि 'आ गया मेरा विश्वास।' यह घरेलूपन है। भगवान मौके पर आ पहुंचते हैं। जब भगत को संकट हो उसी तरह भगवान के संकट समय भगत मौके पर पहुंच जाता है। यह तो गुप्तवेश था। कृष्ण की नजर ने पहचान लिया। पांचों भाईओं ने कृष्ण को नमन किया। आसन ग्रहण किया। वहीं से 'महाभारत' के कृष्ण का आरंभ होता है।

कृष्ण अद्‌भुत है। मैं गत कथा में कहता था कि कृष्ण और कर्ण में साम्य है। फ़र्क भी है। कृष्ण का जन्म कैद में तो कर्ण को भी बक्सें में कैद कर दिया था। कृष्ण को अपनी माँ ने पालन-पोषण नहीं किया। कर्ण का भी अपनी माँ पालन-पोषण न कर सकी। 'महाभारत' में कुन्ती जब कर्ण को समझाने आती है तब कर्ण कहता है, 'मैं राधेय हूं। कौन्तेय नहीं। दानकर्म जानना हो तो कर्ण को पढ़िए। साथ ही साथ अभिमानमुक्त खुमार सीखना हो तो भी कर्ण को पढ़िए। परन्तु इसके साथ थोड़ा कुसंग हो जाय तो कैसी दशा हो जाय यह जानने के लिए भी कर्ण को पढ़िए। बाकी भीतर से कर्ण कृष्णप्रेमी है।

तो 'मानस-रामकृष्णहरि', तीनों हिस्सों में बंटी कथा को आगे बढ़ाए। कल हमने रामजन्मोत्सव मनाया। सुमित्रा के दो पुत्र हुए। कैकेयी ने एक पुत्र को जन्म दिया। अयोध्या का आनंद चार गुना बढ़ गया। चारों भाईओं का नामकरण संस्कार हुआ। दशरथ के बड़े पुत्र का नाम राम रखा। ये समस्त सृष्टि को आराम प्रदान करेंगे। पूरे जगत को प्रेम और त्याग से भर देंगे। ऐसे कैकेयीपुत्र का नाम भरत रखा। जिनके नाम से दुश्मन नहीं पर दुश्मनी खत्म होगी ऐसे बाल का नाम शत्रुघ्न रखा। समस्त जगत के आधार और राम के प्रिय सुमित्रापुत्र का नाम वशिष्ठ ने लक्ष्मण रखा। चारों भाई कुमारावस्था में आने के बाद गुरु आश्रम में वेद पढ़ने गए हैं। जिनके श्वास और उच्छवास में चारों वेद हो उस परमात्मा को पढ़ाई की क्या जरूरत है? जगत को प्रेरणा दी कि किसी गुरु के पास जाकर पढ़ना चाहिए। आज तो अब अपील करने की भी जरूरत नहीं है। सभी के बच्चें खूब पढ़ाई करते हैं। यह इस देश के लिए अच्छी निशानी है। बालकों को पढ़ाइएगा। जो पैसों के अभाव में नहीं पढ़ सकते उनको जिन पर प्रभु की कृपा उतरी है ऐसे परिवार बड़े बनकर उन्हें पढ़ाए। शिक्षण संस्थाओं भी शिक्षण को व्यवसाय न बनाए।

एक बार महात्मा विश्वामित्र यज्ञ रक्षा हेतु रामदर्शन के लिए अयोध्या पधारे हैं, 'मुझे असुरों का समूह सताता है। हमारे अनुष्ठान पूरे नहीं होने देते। मैं आप से रघुनाथ को अनुज सह मांगने आया हूं।' दशरथजी की ममता इन्कार करती है। वशिष्ठजी ने संदेह निकाल दिया। गुरु आज्ञा मिलते राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ वनयात्रा करते हैं। रास्ते में ताड़का नामक राक्षसी आई। प्रभु ने एक ही बाण से उसे निर्वाण दिया। मारीच को बिना नुकीला बाण मारकर शत योजन दूर फेंक दिया। सुबाहु को निर्वाण दिया। थोड़े दिन प्रभु वहां रुके। फ़िर विश्वामित्र महाराज के कहने से धनुषयज्ञ में हाज़िरी देने के लिए जनकपुरी यात्रा शुरू हुई। पदयात्रा आगे बढ़ती है। रास्ते में आश्रम आया। गौतम ऋषि का आश्रम है। कोई एक पथ्थरदेह पड़ा है। रामजी जिज्ञासा करते हैं कि गुरुदेव, यह किसका आश्रम है? विश्वामित्र ने रामजी से कहा, यह गौतम ऋषि का आश्रम है। यह पथ्थरदेह उनकी पत्नी अहल्या है। आप की चरणधूलि चाहती है। वो उपेक्षिता है। इसका कोई स्वीकार नहीं करता। रामजी, आप इनका स्वीकार कीजिए। तुलसी कहते हैं, भगवान के अतिशय पावन की चरणधूलि अहल्या को प्राप्त होती है। प्रभु की पुनित कृपा का अनुभव होते ही निरुत्साही अहल्या में उत्साह जगा। चैतन्य का प्रागट्य हुआ। परमात्मा की स्तुति की। अहल्या का स्वीकार हुआ। यह रामकथा है। जिसका कोई स्वीकार न करे उसका स्वीकार करना। उसे स्थापित कीजिए। अहल्या के उद्धार बाद राम को पतित पावन बिरूद प्राप्त हुआ।

> मैं कृष्ण को तीन रूपों में देखना चाहता हूं। एक, कृष्ण की रासलीला। है कृष्ण, पर मैं नाम देता हूं रासलीला। मैं 'रासलीला' शब्द इसलिए प्रयुक्त करता हूं, क्योंकि कृष्ण ने बलराम के साथ लीला की है। दूसरी रासलीला है। कृष्ण की रासलीला अद्‌भुत है। यह प्रेमलीला है, भक्ति की लीला है। आज तक यह रासलीला ने हमारे अंत:करण को पवित्र करने का पुण्यकर्म किया है। कृष्ण की रासलीला विश्व को मिला प्रेमाद्वैत का अद्‌भुत वरदान है। तीसरी, व्यासपीठ की दृष्टि से राजलीला है। ऐसी कोई राजलीला नहीं है। कृष्ण की राजलीला सर्वाधिक प्रकाशित हुई 'महाभारत' में। कृष्ण की राजलीला में पूरा 'महाभारत' आ जाता है।

वहां से प्रभु आगे बढ़ें। गंगादर्शन किया। स्नान हुआ। तीर्थ के देवताओं को दान देकर प्रभु जनकपुर पधारे। महाराज जनकजी विश्वामित्र का स्वागत करने आम्रकुंज में पधारे हैं। राम को देखते ही जनकराजा खड़े हो गए, 'यह कौन है?' नाम-रूप को मिथ्या माननेवाले परमज्ञानी विदेहराज राम के रूप में डूबे हैं! विश्वामित्र कहते हैं 'राजन्, यह वो परम तत्त्व है, जगत में प्राणीमात्र को प्रिय होता है। साक्षात् परमतत्त्व है।' स्वागत किया। विश्वामित्र, राम-लक्ष्मण तथा अन्य मुनिगण 'सुन्दर सदन' में ठहराए गए हैं। विश्वामित्र, राम-लक्ष्मण ने सहभोज कर थोड़ा विश्राम किया।

मानस-रामकृष्णहरि
।। ७ ।।

प्रेमयज्ञ में तो केवल आंसुओं की आहुति होती है

एक प्रश्न आया है कि भारतीय विचारधारा में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चार पुरुषार्थ है। यह भारतीय विचारधारा मानी वैश्विक विचारधारा। ये चार पुरुषार्थ अपने यहां प्रस्थापित हुए। युवक का प्रश्न है कि तुलसीदास ऐसा क्यों लिखते हैं कि -

श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि ।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि ।।

तुलसीदास ने चार 'फल' बताए हैं। तो ये चार 'पुरुषार्थ' है कि 'फल'? बाप, फल को पुरुषार्थ से अलग मत कीजिए। पुरुषार्थ ही परिणाम है। मुझे कई लोग कहते हैं कि माला फेरने का फल क्या है? मैं तो इतना कहूं कि इतनी व्यस्त दुनिया में तू माला फेरता है वही इसका फल है! मंदिर जाने का फल और क्या है? अनिवार्यत: कुछ भी न करना। मुझे दो-तीन दिनों से युवक पूछ रहे हैं, मंदिर दबाव में आकर जाना पड़े तो क्या करे? जबरदस्ती या दबाव में आकर कुछ मत कीजिए। भीतरीभाव कहे तो जाना चाहिए। मंदिर की महिमा है। मस्जिद जाना चाहिए। मस्जिद की महिमा है। मौज आए तो जाइए। यदि आप न जाए पर आप के मन में मंदिर का भाव जगे तो भी वहां आप की उपस्थिति मानी जाएगी। वहां एक अलग ही रजिस्टर है।

मैंने कई बार कहा है। एक फकीर बारह बरसों से मस्जिद में नमाज़ पढ़ता है। पांच बार की नमाज़ पढ़ता है। एक बार भी नमाज़ खंड़ित नहीं हुई। ऐसा कहा जाता है कि तेरहवें वर्ष का पहला दिन, पहली नमाज़ के समय आकाशवाणी हुई कि हे फ़कीर, तू बारह वर्षों से अखंडित नमाज़ पढ़ता है पर खुदा ने तेरी एक भी बंदगी कुबूल नहीं की है! सन्नाटा छा गया! अन्य मुस्लिम बिरादरों की आंखें भी गीली हो गई। सब दु:खी हो गए। सभी ने देखा कि फ़कीर की प्रतिक्रिया क्या थी? जिस खंभे के पास बैठकर नमाज़ अदा करता था उस खंभे को गले लगाकर वह नाचता था! आनंदमग्न हो गया! तब बाकी सब को लगा यह पागल हो गया है! सब ने कहा, आप को तो खंभे से सिर पछाड़ना चाहिए कि एक भी बंदगी कुबूल नहीं हुई है! तब फ़कीर ने कहा, 'बारह साल से नमाज़ पढ़ता हूं यह कुबूल हो या न हो पर अल्लाह को इतनी ख़बर तो है कि कोई बारह साल से नमाज़ पढ़ रहा है!

मेरे भाई-बहन, इतना काफ़ी है की गाड़ी चलाते समय उसने मंदिर जाने का विचार किया था पर समय के अभाव से नहीं आ सका। वहां एन्ट्री हो गई। पर दबाव, लोभ या डर से जाना पड़े यह ठीक नहीं है। एक बात समझ

लीजिए, लोभ या भय से धर्म का आचरण हो ही नहीं सकता। कितने ही युवक मुझ से पूछते हैं कि इच्छा होने पर जाय तो चलें? मंदिर जाना अच्छी बात है पर शायद रोज न भी जा सके। किसी पर दबाव नहीं होना चाहिए।

आप पुरुषार्थ करते हैं वही फल है। माला फेरने का दूसरा फल क्या है? कथा श्रवण का क्या फल है? आप नौ दिन कथा सुन सके वही फल है। फ़िर जो मिले वही रस है। अत: युवा से स्पष्टता करनी है कि धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ये पुरुषार्थ है। तुलसी ने फल भी बताए हैं। जो पुरुषार्थ है, वही फल है। इसमें और क्या चाहिए? ये चार फल है तो इसका रस होना चाहिए। इसका रस कौन-सा है? धर्म के रस का नाम 'रामचरित मानस' में विरति है। धर्म के ज्यूस का नाम 'विरति' है। 'विरति' मानी वैराग्य। 'विरति' मानी त्याग करने की वृत्ति; 'विरति' मानी सहज औदार्य। छोड़ देने का भाव। यह धर्म के फल का रस है। धर्म का फल है 'रामचरित मानस' में 'विरति'-

धरम ते बिरति जोग ते ग्याना।
ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना।।

हिन्दुधर्म, मुस्लिमधर्म, ईसाई धर्म-ये सब नाम निकाल दीजिए। धर्म मानी धर्म। तो मूल धर्म जिसे शास्त्र 'राम' कहते हैं, 'रामो विग्रहवान धर्म।' मूल धर्म, मूल दिखे नहीं पर उसी मूल में से सब निकले। पत्ते, डालियां, फल-फूल सब बाहर है। इसका इतिहास रख सकते हैं। बाकी मूल तो अविगत-अलख है। यह रामतत्त्व है। इसी में से सब निकला है। राम धर्म का रस विरति है। इसका अर्थ शास्त्र में बहुत बड़ा है। पर हम सीधा-सादा अर्थ करे। विरति मानी दूसरों के लिए त्याग करने की रुचि। 'भगवान ने मुझे धर्म दिया है तो मैं कुछ करूं।' ऐसी सहज उदारता होनी चाहिए। चाहे कितना बड़ा धर्मगुरु हो, चाहे कितनी बड़ी धार्मिक संस्था हो पर वहां विरति न दिखे तो समझना कि यह रसहीन धार्मिक है। शास्त्रों ने कृष्ण को साक्षात् धर्म कहा हो तो आप देखेंगे, कृष्ण में रस है। 'प्रेमरस पाने तुं मोरना पिच्छधर।' राम को साक्षात् धर्म कहा जाय तो राम में रस है। अपने यहां बगैर रामरस सभी व्यंजन फ़िक्के लगते हैं। नरसिंह मेहता-

रामसभामां अमे रमवाने ग्या'तां,
पसली भरीने रस पीधो रे...

उसका रस विरति है, जो व्यापक होनी चाहिए। फिर उसमें भेद नहीं होते। हम रहते हैं बड़े कमरे में पर अंदर से बहुत संकीर्ण है! वरिष्ठजनों के पास व्यापक अनुभव है। खास कर मुझे युवानों से कहना है। मेरी व्यासपीठ यौवन चाहती है। साधु हूं तो भीख मांगता हूं, साल में एक बार अपने बच्चों को कथा में नौ दिन लाइए। बालकों के जीवन में क्रान्ति होगी। मैं भीड़ बढ़ाने के लिए नहीं कहता। मेरा भीड़ से क्या लेना-देना? हमारे मज़बूर साहब कहते थे-

ना कोई गुरु, ना कोई चेला।
मेले में अकेला, अकेले में मेला।

भीड़ से क्या लेना-देना? यौवन खिलता जाता है। मेरी श्रद्धा दृढ़ होती जाती है।

तो, आप का धर्म रस बने। रस बहे। फिर अर्थ; अर्थ मानी पैसा। तो पैसे का रस क्या? अर्थ का रस नीति है। वास्तव में आप अर्थोपार्जन तभी कर सकते हैं जब नीति की मात्रा बढ़ती है। मुझे एक उद्योगपति कहते थे, 'गलत रास्ते से ज्यादा कमाया जा सकता है यह गलत है। सच्चाई से अच्छी कमाई हो सकती है।' मुझे यह बात पसंद आई। अर्थ का रस नीति है। काम का रस रति है। काम हो पर रति न हो तो रस नहीं है। काम को एक ही दृष्टि से देखा जाता है। काम तो सीमित समय का मेहमान है। पर परमात्मा के चरणों में अनुराग बढ़े उसे रति कहते हैं। 'रामचरित मानस' में भरतजी कहते हैं, 'प्रभु मुझे काम नहीं, मुझे काम का रस चाहिए।' 'जनम जनम रति राम पद।' बाप, मोक्ष का रस शांति है। जब आप को शांति मिले समझिए कि मोक्ष मिल गया। मोक्ष मानी

क्या? मोक्ष मानी शांति। आप को कथा में शांति मिलती है तो यह मोक्ष है। मुझे रामगुण गाने में शांति मिलती है तो यह मेरा मोक्ष है।। आप को अपने कारखाने की ओफिस में बैठकर शांति मिलती है तो यह मोक्ष है। मोक्ष का रस शांति है। मुझे तो कथा ही मोक्ष है।

युवा भाईओं-बहनों, यह कोई उपदेश नहीं है। एक सीधा संवाद है। इसीलिए मैं आप से सरलता से बातें करता हूं। यह कथा की नई थीम है। मैं ज्यादातर आप के साथ रहकर बातें करना चाहता हूं। मैं नहीं चाहता आप मेरे पीछे-पीछे चलिए। मैं नहीं चाहता मैं आप के पीछे-पीछे चलूं। हम दोनों परस्पर हाथ पकड़कर चले। सब एकत्र होकर कार्य करे तो अद्‌भुत होता है। मेरी व्यासपीठ की यह रीति है, तो मैं ऐसे काम करता हूं। बस, यह मेरी प्रयोगशाला है। युवकों कथा सुने। मैं भीड़ बढ़ाने के लिए नहीं कहता। मुझे लगता है कि यह भीड है ही नहीं; यह तो सब का निझी और हस्तगत एकान्त है। इतनी भीड़ में भी मेरा-आप का एकान्त है। और बहुत ही व्यक्तिगत बात करनी हो तो निजी एकान्त में कही जाती है। आज मेरे पास एक शे'र है-

वो मिले जो रास्ते में तो बस इतना कहना उससे,
मैं उदास हूं, मैं अकेला हूं, मेरे पास आके रोए।

तो, ऐसा एक महत्त्वपूर्ण एकांत कि हमें लगे कि इनके सिवा किसी ओर से बात नहीं हो सकती। हमें ऐसा लगे कि मैं हरि को स्पर्श कर रहाहूं। हरि के सिवा और कोई नहीं है। बंदगी मानी क्या? बंदगी मानी परमात्मा का स्मरण। सुरत के कवि भगवतीकुमार शर्मा ने कविता लिखी है-

हरि, मने अढ़ी अक्षर शिखवाडो!
अेंशीने आरे आव्यो छुं,
मारो अगर जीवाडो।
पोथीनां रींगणां बधां में पोथीमां ज वघार्यां,
आंगण सूनुं, क्यारो खाली, प्रेमनी वेल उगाडो।

अस्सी-नब्बे साल; घबराना नहीं। सोचना जरुर कि हरि को कितना भजा है? भीतरी कमाई कितनी की? और वह ढ़ाई अक्षर? 'ढ़ाई अक्षर प्रेम का।' इसीलिए मैं कथा को 'ज्ञानयज्ञ' नहीं, 'प्रेमयज्ञ' कहता हूं। दूसरे यज्ञों में तो घी की आहुति होती है, प्रेमयज्ञ में तो केवल आंसूओं की आहुति होती है। दूसरे यज्ञ में हथेली में पानी लेना पड़े पर प्रेमयज्ञ में तो आंख में पानी लेना पड़े।

तो, भक्तों को ऐसा एकान्त चाहिए। उसका हाथ जहां जाय वहां हरि का स्पर्श होता है। उसकी स्मृति में हरि, उसके बोलने में हरि! तो मेरी दृष्टि में 'भगवद्‌कथा' अपना एकांत है। चाहे भीड़ हो। भीड़ हो इसलिए मैं नहीं कहता। यार, मैंने भीड़ बहुत देख ली आप सब की शुभकामना से। मुझे भीड़ से पहले भी कोई संबंध नहीं था, अब भी नहीं है। मैं कहता हूं, साल में एक बार युवकों को कथा में भेजिए। यह भीड़ बढ़ाने नहीं कहता। उनके जीवन में धर्म का रस जगे। अर्थ का रस जगे। काम का रस जगे। मोक्ष का रस जगे। अत: यह निमंत्रण है।

'मानस-रामकृष्णहरि', शुरू में हमने रामतत्त्व की थोड़ी चर्चा की। कल थोड़ी कृष्णतत्त्व की चर्चा की। कृष्ण 'श्रीमद् भागवत' में दीखते हैं। कृष्ण को चारों ओर से देखना हो तो 'महाभारत' ही है। सर्वांग कृष्णदर्शन 'महाभारत' में है। मेरे निजी मतानुसार 'महाभारत' के कृष्ण को समझना है तो 'महाभारत' के कर्ण को समझना पड़ेगा। मेरा भी कर्ण है। सब का अपना-अपना कर्ण है। मैं कहता हूं, यह सिर जो काटा वह उल्टा नहीं पड़ा था, सीधा पड़ा है। कर्ण ने आंखें बंद करने से पहले सूर्यदर्शन किए। पिता को प्रणाम किए। फ़िर सिर थोड़ा टेढ़ा पड़ा है, जिस ओर कृष्ण का रथ था। शायद कृष्ण ने कहा होगा, 'श्री कृष्ण: शरणं मम्।'

तो कृष्णावतार समझने के लिए तुलसी ने 'कृष्णचरित मानस' शंकर के मुख से रति को सुनाया है तब ये प्रसंग नज़र के सामने आते हैं। तो बाप, कथा जैसा एकान्त कहां है? कल एक युवक मुझ से कह रहा था बापू, कभी-कभी बहुत क्रोध आ जाता है। क्रोध आता है तब पता चलता है कि क्रोध नहीं करना चाहिए। पर कुछ न कुछ अनाप-शनाप निकल जाता है! दूसरे ही क्षण समझ में आता है कि ऐसा नहीं करना चाहिए था। इस क्रोध को कैसे काबू में लिया जाय? कल युवक एक सरस प्रश्न पूछता था। मैंने कहा, बाप! मैं जिस रूम में ठहरा हूं उस रूम की स्विचीज़ पांच मिनट में जान लेता हूं। कोई भी जान ले कि इस स्विच को दबाने से यह होता है। उसे दबाने से वह होता है। हमें पता चल जाता है। पर ९५ वर्ष जिस कमरे में रहे उसकी स्विच का पता नहीं कि क्रोध आए तब कौन-सी स्विच ओफ करनी है? इसकी जानकारी के लिए किसी बुद्धपुरुष की शरण में जाना

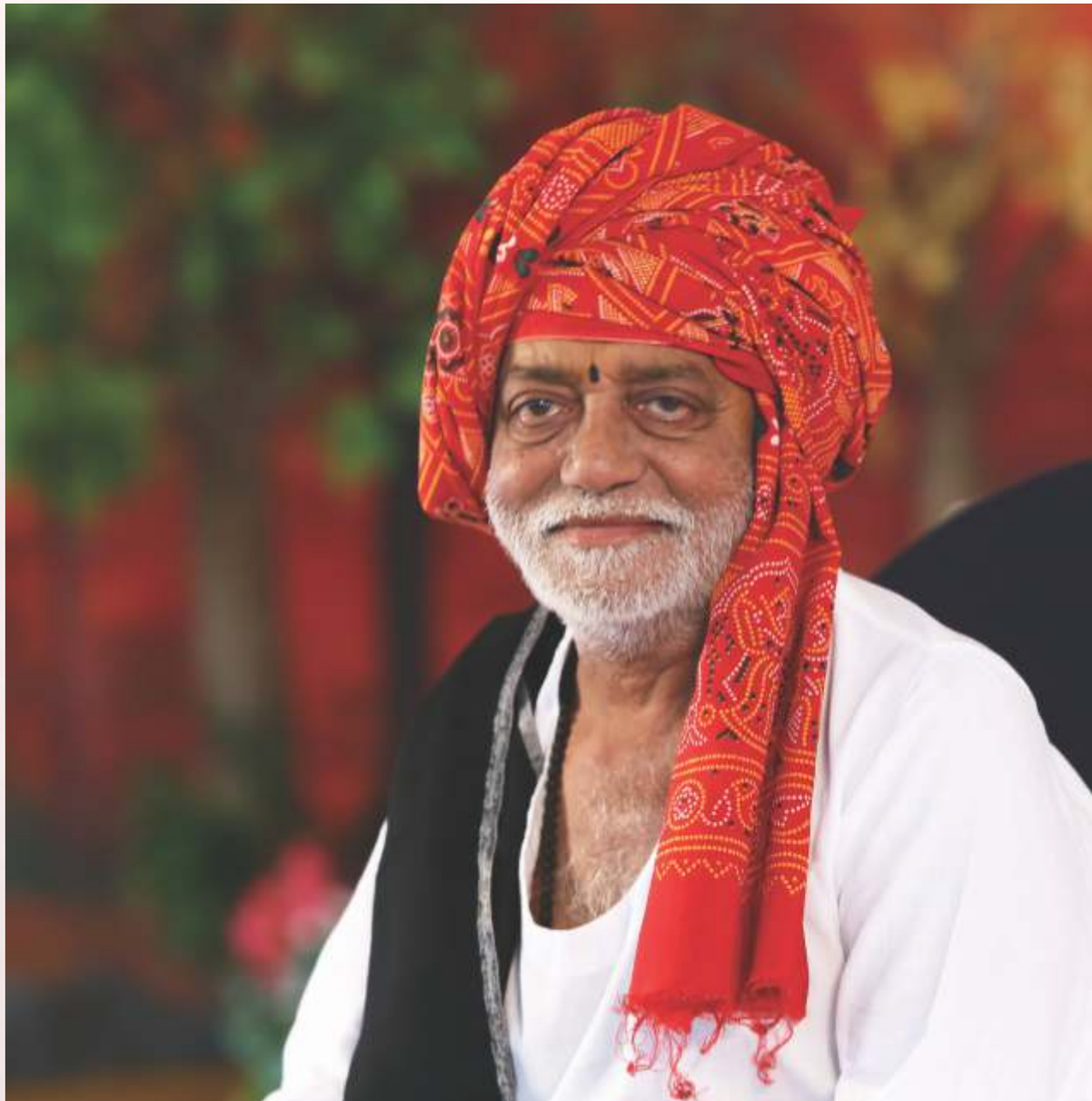

चाहिए। वह बुद्धपुरुष होना चाहिए। आप का शोषण नहीं होना चाहिए। आप का गला पकड़े, दबाए, आप ऐसा ही करे ऐसा आग्रह रखे, मैं इसकी बात नहीं करता। जो आदमी धर्म का निर्वाह करता हो उनको मांगना ही न पड़े! मुझे यही समझ में नहीं आता! क्या धर्म की ताकत कमज़ोर है? कृष्ण की शरणागति की ताकत कम है? वह नरसैंया की हूंडी स्वीकारे तो हमनें भाव-कुभाव से नाम लिया हो और आख़िरी घड़ी न आए तो वह ईश्वर किस काम का? पर शास्त्र में ऐसा लिखा है कि 'अलुब्धः स्थिरगात्रः आज्ञाकारी जितेन्द्रीय।' शास्त्र में बताया गया है कि शिष्य कैसा होना चाहिए? 'अलुब्धः', 'स्थिरगात्रः', 'आज्ञाकारी', 'जितेन्द्रीय'; न हो तो ऐसा शिष्य गुरु को दुःखदायी होता है। ऐसा वचन है। 'अलुब्धः' आश्रित ऐसा होना चाहिए कि उसे किसी से लोभ का संबंध नहीं है। वह मुक्ति नहीं मांगता। बस, उसका भीतर प्रसन्न हो। मुक्ति क्यों मांगते हो? ईश्वरदर्शन भी क्यों? शायद यह सात्त्विक लोभ है। गालिब का शे'र है-

गालिब न कर हुजूरमें तू बार बार अरज,
जाहिर है तेरा हाल उनको कहे बगैर।

उसे पता है कि तेरी क्या जरूरत है? सच्चे बुद्धपुरुष अपने शिष्य से कोई अपेक्षा, लोभ नहीं रखते। शिष्य भी अलुब्ध होना चाहिए। या तो जिसके निकट अपनी कामनाओं का शमन हो उसका नाम बुद्धपुरुष है। अपनी इच्छाएं झडने लगे, किसी परमपुरुष की, ईश्वर की सभी परीक्षाओं मे उत्तीर्ण होकर आया हो, ईश्वर भी जिसे प्रेम करता हो वह हमें मिल जाय फ़िर हमें ओर क्या चाहिए? एक वह न मिले बाकी सब मिले तो मिलने का अर्थ क्या? एक फिल्मी गीत है-

एक तू ना मिला, सारी दुनिया मिले तो भी क्या है?

हे हरि! अमुक वस्तु तो हमारे हाथ में से निकल जाय फ़िर पता चले कि यह न हो तो क्या हो जाता? आनंद जार-जार रोया जब बुद्ध चले गए! कोई तो कहनेवाला होना चाहिए कि बाप, मत रो। ऐसा न हो तो फ़िर क्या है? ऐसा तत्त्व बुद्धपुरुष है। पर उसके आश्रय में आनेवाला भी अलुब्ध होना चाहिए।

दूसरा लक्षण 'स्थिरगात्र' है। शरीर से स्थिर होना चाहिए। चंचल नहीं होना चाहिए। अपना शरीर जितना हिलता है उतना ही मन ज्यादा चंचल होता है। यह मनोवैज्ञानिकों का भी सिद्धांत है। जगद्गुरु शंकराचार्य का भी सिद्धांत है। जो आदमी एक ही जगह पर बैठ न सके तो समझना कि इस आदमी का मन बहुत ही चंचल होगा। ऐसा ही आश्रित बुद्धपुरुष को पा सकता है, जो 'स्थिरगात्र' है। दस हजार भिख्खु बैठे थे। सुबह की उपासना थी। सभी शांत थे। बुद्ध के हाथ में फूल था। दस-पंद्रह मिनट तक सभी मौन थे। फ़िर धीरे-धीरे हलचल शुरू हुई। प्रवचन का समय पूरा हो जाता है। बुद्ध फूल ही देखा करते हैं। महाकश्यप नामक शिष्य दूर बैठा था। उसकी ओर बुद्ध ने देखा, संकेत किया। वह हंसता हुआ नजदीक आता है और बुद्ध हाथ में रखा फूल उसे दे देता है। बुद्ध ने कहा, आज का प्रवचन पूरा हुआ। सभी अस्थिरगात्र थे, महाकश्यप स्थिरगात्र था। शरीर की चंचलता मन की चंचलता का परिचय है।

बुद्धपुरुष का आश्रित 'अलुब्ध', 'स्थिरगात्र' और 'आज्ञाकारी' होना चाहिए। एक बार बुद्धपुरुष कहे कि ऐसा करना, फिर तर्क न करे क्योंकि वह बुद्धपुरुष है। ऐसा हो उसकी आज्ञा का पालन करने की बात है। विनोबा को हिमालय जाना था। वे प्रवृत्ति के जीव ही नहीं थे। महात्मा गांधी का संदेशा आया कि आप को राष्ट्रसेवा करने इस जगह पर जाना है। विनोबाजी को रास्ते में ऐसा संदेश मिलता है। उसी क्षण उन्होंने मोड़ किया कि गांधी बापू की आज्ञा है। आज्ञाकारी। और चोथा लक्षण है 'जितेन्द्रीय।' वह जितेन्द्रीय होता है। ५०-७० वर्ष हुए पर हमें पता नहीं कि अपने विकारों की स्विच कहां है? रूम की सभी स्विच जानते हैं! सत्संग का अर्थ है कि अपनी स्विच पकड़ सके। क्रोध की मात्रा हम ही तय करे कि यह पंखा कितना घुमाना है। लोभ की मात्रा हम ही तय कर सकते हैं। काम की मात्रा साधक स्वयं तय कर सकता है। काम बहुत बड़ी ऊर्जा है। अपने यहां वैराग्य न जगा हो फ़िर भी साधु बना देने की जो प्रवृत्ति है यह ठीक नहीं है। उसे स्विच का ज्ञान दीजिए कि तू खुद ही तेरी ऊर्जा को कंट्रोल करना सीख जा। इसीलिए किसी बुद्धपुरुष की शरण में जाय, जहां हृदय का भरोसा रहे कि यहां अपना शोषण नहीं होगा। यहां अपने पर कुछ लादा नहीं जायेगा। यहां हमें अपनी निजता में स्थिर किया जाएगा। सच्चे अध्यात्म का मार्ग तो यह है।

कल कथा के क्रम में देखा, विश्वामित्र भगवान राम और लक्ष्मण को लेकर जनकपुर पहुंचे हैं। 'मानस' का यह प्रसिद्ध प्रसंग आप जानते हैं कि भगवान राम-लक्ष्मण जनकपुर देखने जाते हैं। जनकपुर के समवयस्क कुमार उनके साथ हो लेते हैं। अपनी-अपनी रुचि अनुसार ये कुमार नगरदर्शन करवाते हैं। जनकपुर के वृद्ध देखने गए पर राम के निकट न गए। जनकपुर की स्त्रियां दर्शनहेतु झरोखें में खड़ी है। फूलों की वृष्टि करती है। हृदय हर्षित है। यह कथा हंमेशा इसी तरह कही गई है कि जो पुरुष थे वह ज्ञान है। ज्ञान ईश्वर को देखे लेकिन बहुत गंभीर रहता है। बालक निर्दोषता से साथ रहे। पर बहनों ने परिचय पा लिया। वे भक्ति की प्रतीक है। भक्ति परमात्मा का परिचय प्राप्त कर लेती है ज्ञान की तुलना में जल्दी। इतनी सारी बहनें राम को पहचान गई हैं। ज्ञान से भगवान दिखाई देंगे। निर्दोषता होगी तो भगवान हमारे साथ खेलेंगे। भक्ति से परमात्मा का संपूर्ण परिचय प्राप्त होगा। इसीलिए अपने यहां प्रेमलक्षणा भक्ति का महत्त्व है। पूरा नगर जो नाम-रूप को मिथ्या मानता था वो ही नाम-रूप में डूबा है।

संध्या का समय है। प्रभु गुरुजी के पास लौट आए हैं। आज्ञा लेकर संध्या-वंदना की। रात्रि भोज किया। गुरु की चरणसेवा की। प्रथम रात्रि को रामजी ने मिथिला में मुकाम किया। सुबह होते ही दोनों गुरुपूजा के लिए पुष्प लेने जनकराजा की पुष्पवाटिका में जाते हैं। उसी वक्त जानकीजी आती है। सरोवर में सखिओं के साथ स्नान किया। फ़िर भवानी मंदिर में स्तुति करती है। एक सखी ने राम-लक्ष्मण के दर्शन कर लिए। सखी दौड़ती-

दौड़ती पार्वती के मंदिर में आई और जानकी को कहती है, गौरीपूजा तो बाद में भी होगी। अभी दो राजकुमार बाग में आए हैं उनके दर्शन कर लीजिए। सीताजी सखी के पीछे-पीछे चली। इस प्रसंग का तात्त्विक भाव मैंने आप के पास रखा है। पर ये विचार मेरी व्यासपीठ के नहीं है। ये विचार पंडित रामकिंकरजी महाराज के हैं। रामदर्शन की साधक यात्रा उन्होंने इसमें बताई। रामदर्शन के लिए इतना करना पड़े। पहले, बाग में प्रवेश करना, ज्यों सीता ने सखिओं के साथ प्रवेश किया।

तुलसीदासजी ने 'रामचरित मानस' में इसका तात्त्विक अर्थ बताया है। 'संतसभा चहु दिसि अमराई।'

मुझे दो-तीन दिनों से युवक पूछ रहे हैं, दबाव में आकर मंदिर जाना पड़े तब क्या करना चाहिए? दबाव में आकर कुछ मत कीजिए। मुझे पूछा है तो दो-टूक जवाब, जबरदस्ती कुछ भी नहीं। आप का भीतर कहे तो जाना। मंदिर की महिमा है। मंदिर जाना चाहिए। मस्जिद की महिमा है। मस्जिद जाना चाहिए। आप को मौज आए तब जाइए। यदि आप न गए हो पर आप के मन में मंदिर का भाव जगे तो भी वहां नोट हो जाता है। वहां एक अलग ही रजिस्टर रहता है। एक वस्तु समझ लीजिए कि लोभ से धर्म नहीं हो सकता। भय से धर्म आचरण हो ही नहीं सकता। मंदिर जाना अच्छी बात है। शायद हररोज न जा सके। किसी पर दबाव नहीं होना चाहिए।

संतों की सभा आम्रकुंज है। सीताजी बाग में गई। किसी भी व्यक्ति को रामदर्शन करने हो तो पहले संतों का सत्संग करना चाहिए। बाग में जाना मानी संत का संग करना। मैंने कई बार आप से कहा है कि भगवद्‌चर्चा होती हो वहां जाना ईश्वर दर्शन की प्रथम पायदान है। वह 'सत्संग' होना चाहिए। आप कोई अच्छी किताब पढ़े तो वह भी सत्संग है। सुंदर कविता सुने तो वह भी सत्संग है। कोई अच्छा दृश्य देखे तो वह सत्संग है। बाप, सत्संग कीजिए। सत्संग से विवेक प्रगट होगा। तो पहले सत्संग कीजिए। सीताजी सखिओं के साथ बाग में गई। फ़िर सरोवर में स्नान किया। सरोवर किसे कहे यह भी 'रामायण' में लिखा है-

संत हृदय जस निर्मल बारी।
बांधे घाट मनोहर चारी।।

संत का हृदय सरोवर है। इसमें स्नान करना। सत्संग करते-करते संत को प्रिय होना। हम साधु को याद करे, पर साधु क्यों हमें याद करे? और किसी वस्तु के लिए नहीं वह याद करे कि वह साधक था। कहीं भटक तो नहीं गया होगा न? साधु के हृदय में स्थान प्राप्त करना यह रामदर्शन की दूसरी पायदान है। फ़िर सीताजी गौरीपूजा करने गई। तुलसीदासजी कहते हैं, पार्वती मानी श्रद्धा। सत्संग करना चाहिए। संतप्रिय हो फ़िर जीवन में श्रद्धा की उपासना होती है। सत्संग करेंगे, संतप्रिय बनेंगे, श्रद्धा रखेंगे तो कोई न कोई बुद्धपुरुष हमें मिल जाएगा। वह ऐसा मिलेगा जिसने राम को देखा हो, जिसने परम तत्त्व का अनुभव किया हो। वह हमें रामदर्शन तक ले जाय। सीताजी ने सखी को आगे रखी। बुद्धपुरुष हमें मिले तो उन्हें आगे रखिए; उनके मार्गदर्शन से जीना है।

सीताजी ने रामदर्शन किए। राम और जानकी तो एक ही है। पर यह तो जनकपुत्री है। तुलसीदासजी ने लिखा है, जानकी ने नयनों के द्वार से रामरूप को अपने हृदय के कमरे में बिराजमान कर पर्देबंद कर दिए। भगवान रामजी ने दूर से सीतादर्शन किए। लक्ष्मणजी ने कहा, 'यह जनकजी की कन्या सीता है; जिसके लिए इतना बड़ा धनुषयज्ञ हो रहा है; जिसे देखते ही मेरा पवित्र मन क्षोभित हुआ है।' अलौकिक रूप है, मन पवित्र है। इसलिए आकर्षण स्वाभाविक है। पर सामने रूप लौकिक हो तो आकर्षण नहीं होता। यदि रूप अलौकिक है, पर मलिन मन हो तो आकर्षण संभव नहीं है। यहां मन की भी पवित्रता और रूप की भी कोई लौकिक गंधमात्र नहीं है।

जानकीजी पुन: मंदिर में आती हैं। भवानी की स्तुति करती है। कुमारिकाएं यह स्तुति सीख जाय तो बड़ा लाभ होता है। मैं कोई प्रलोभन नहीं देता। पर इस स्तुति पठन से लडकियों का जीवन दिव्य बनता है। सुंदर स्तुति है-

जय जय गिरिबरराज किसोरी ।
जय महेस मुख चंद चकोरी ।।

'रामायण' में ऐसा लिखा है कि पार्वती की विनय और भाव की स्तुति सुनकर मूर्ति थोड़ी हंसी, बोली। मूर्ति ने अपने गले का प्रसाद नीचे गिराया है। पार्वती ने आशीर्वाद दिया कि जानकी, तुम्हारें मन में जो सांवरा राजकुमार बस गया है वह तुम्हें पति के रूप में प्राप्त होंगे।' सखीओं के साथ सीता भवन में लौट आई है। यहां विश्वामित्र के पास राम-लक्ष्मण पधारे हैं।

अगले दिन धनुषयज्ञ है। विश्वामित्रजी राम-लक्ष्मण को लेकर आए हैं। कोई धनुष नहीं तोड़ सकता। विश्वामित्र के कहने से भगवान राम खड़े हुए और क्षणार्ध में धनुष तोड़ा। प्रभु की जयजयकार हुई। जानकीजी प्रभु को माला पहनाती है। परशुराम आते हैं। क्रोधित होते हैं। परंतु राम के रहस्यों की जानकारी पाकर विदा होते हैं। जनक के दूत अयोध्या जाते हैं। दशरथजी बारात लेकर जनकपुर आते हैं। लोक और वेदविदित विवाह संपन्न होता है। वशिष्ठजी के कहने से ऊर्मिला लक्ष्मण को, मांडवी भरत को, श्रुतकीर्ति शत्रुघ्न को अर्पण होती है।

स्नेह के धागे से बंधी बारात अवधपुरी लौटती है। दिन बीतते हैं। मेहमान विदा होते हैं। विश्वामित्र ने जाना कि राजा का कार्य पूरा हुआ; मेरा कार्य पूरा हुआ; मुझे पुनः अपना भजन शुरू कर देना चाहिए। विरक्त महापुरुष की बिदा के समय दशरथजी मांग रखते हैं-

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।
करब सदा लरिकन्ह पर छोहू।
दरसनु देत रहब मुनि मोहू।।

दशरथजी रघुकुल के नाथ है। पर सम्राट आज विश्वामित्र को कहते हैं, 'भगवन्, हमारे नाथ आप है। यह सारी संपदा आप की है। मैं तो रानिओं, बालकों समेत आप का सेवक हूं। शायद हम आप को भूल जाए, संसार के व्यवहार में डूब जाते हैं। पर प्रभु एक बिनती कि जब आप को भजन में से अवकाश मिले और आप के मन में हमारी याद आए तब कभी-कभी दर्शनलाभ दीजिएगा।'

साधु से क्या चाहे? दर्शन दीजिएगा। शास्त्र वचन स्पष्ट है और मेरा भरोसा स्पष्ट है कि साधु के दर्शन से पाप नष्ट होते हैं। इसकी प्रतीति उस दिन होती है जब हमारी प्रसन्नता में वृद्धि हो। वह साधु है यह सिद्ध होगा। महाराज विश्वामित्र बिदा हुए। सीता-राम का चरित्र समुद्र जैसा है, कौन पार पाए? वाणी को पवित्र करने यह कथा कही गई है। गोस्वामीजी 'रामचरित मानस' का प्रथम सोपान समाप्त करते हैं।

मानस-रामकृष्णहरि
॥ ८ ॥

सत्य से जीएं, प्रेम से देखें,
करुणा फैलाकर जायें।

प्रारंभ में आदरणीय वर्षाबहेन अडालजा ने 'रामायण', 'महाभारत' विषयक अपने विचार, अनुभव, प्रवास यात्रा आदि का संक्षिप्त वर्णन कर हमें मार्गदर्शन दिया। बहन, आप ने अच्छी बातें बताई। राम हो या कृष्ण, सब कुछ कर सकते हैं पर अपनी प्रतीक्षा नहीं छीन सकते। प्रतीक्षा अपना अधिकार है। ब्रह्मतत्त्व की तो प्रतीक्षा ही की जा सकती है न? उसकी परीक्षा कहां होती है? हो सकती हो तो मेरा तुलसी क्यों कहे-

राम ब्रह्म परमारथ रूपा।।
अबिगत अलख अनादि अनूपा।।

उसका ब्यौरा नहीं होता। उसको लिखा नहीं जा सकता। उसकी परीक्षा कौन कर सके? थोड़ी बहुत समीक्षा हो सकती है। अपने जैसे जीव तो प्रतीक्षा ही कर सकते हैं अहल्या की तरह, माँ जानकी की तरह, मंदोदरी की तरह। एक बहुत अच्छी सभा में एक महिला के वस्त्र खींचे जाते हो तब द्रौपदी की तरह उसकी प्रतीक्षा ही की जा सकती है। जो प्रतीक्षा करेगा उसे मिलेंगे। वे स्वयं नहीं आयेंगे तो उनकी स्मृति आयेगी। हमें स्वयं को कहां देखना है? हमें तो स्मृति ही पर्याप्त है। नंद-यशोदा को पता है, कृष्ण गया अब नहीं आएगा, 'हे परम! उनकी स्मृति बनी रहे।' इसीलिए शुकदेवजी के शब्द बार-बार चित्त पर टकराते हैं, 'इति संस्मृत्य संस्मृत्य।' मैं वो फिलम की पंक्ति गाता रहता हूं-

लो आ गई उनकी याद, वो नहीं आए...

क्या स्मृति प्रयत्नों से आती है? वह तो प्रसाद से आती है। मुझे हंमेशा गुरुकृपा से समझ में आया है कि हम उन्हें याद नहीं करते, वो हमें याद करते हैं अत: हम उन्हें याद करते हैं। मैं प्रायमरी स्कूल में पढ़ा हूं; पढ़ाया भी है गांधी विचार की स्कूल में। मैं पढ़ता था तब हमें चरखा कांतना पड़ता था। अभी भी मैं चरखा चला सकता हूं। मैंने शिक्षक की पढ़ाई की तब भी मुझे वो करना पड़ा। इस पर से मैं सोचता था कि वह बड़ा चक्र एक वर्तुल पूरा करे वहां वह तकली पता नहीं रहता कितनी बार घूम जाती है! मुझे ऐसा लगता है कि कृष्ण हमें एक बार याद करते होंगे तो हम उन्हें १०८ बार याद करते हैं। हम तो तकली है और थोड़े तकलादी भी है।

आज मेरे पास सुंदर पत्र आए हैं। कहने की जरूरत नहीं, विषय क्या होंगे? यह आप अपने आप तय कर ले। पत्रों का प्राय: नब्बे प्रतिशत विषय वेलेन्टाइन डे है! मुझे आनंद है कि कितनों को जानता हूं ऐसे बूढ़े ने भी लिखा है! मेरे काठियावाड को तो मैं अवश्य पहचानूं! आज गोविंदभाई ने अच्छी व्यवस्था की। मैं सब के दर्शन कर सका। मैं व्यवस्था तोड़कर कार से नीचे उतर गया क्योंकि मुझे सब दिखते नहीं थे। अत: मुझे लगा मैं थोड़ा पैदल चलूं। और भूल मत जाना, वेदों का सार उपनिषद है। संतों-भक्तों ने उपनिषद का सार 'श्रीमद् भगवद्गीता' में कहा। मेरी दृष्टि से 'भगवद्गीता' का सार 'रामचरित मानस' है। 'रामचरित मानस' का सार 'सुन्दरकांड' है। 'सुन्दरकांड' का सार 'हनुमान चालीसा' है। 'हनुमान चालीसा' का सार 'मानव' है। यह 'मानव' सब का सार है। आज मुझे आप की परिकम्मा करने का अवसर प्राप्त हुआ। मैं प्रसन्न हूं। आप कितने शिस्त से बैठे हैं!

कल मुझे एक युवक पूछता था कि क्या यह सच है कि जहां कथा हो वहां हनुमान होते ही है? भाई, हनुमानजी मानी जिस हनुमानजी का विग्रह हम अपनी तरह से तय करते हैं उसी रूप में हनुमानजी हो ऐसा आग्रह क्यों रखे? पर कोई होता है तब यह सब पूरा होता है! ऐसी मेरी निजी श्रद्धा है। फ़िर चाहे वो मौन के रूप में हो, शब्द के रूप में हो, सूर के रूप में हो, स्वर के रूप में हो, असंगता के रूप में हो, अज्ञेय तत्त्वरूप में हो पर कोई होता है।

तो बाप, मैं सब को देख रहा था उसमें मेरे गांव के कई चेहरें देखे। उसमें एक बूढ़े की चिठ्ठी वेलेन्टाइन डे पर है! प्रेम का दिन; बधाई हो। भारत की विचारधारा में यह दिन और उसको मनाने के बारे में कई प्रश्न पूछे हैं। छोड़ो न यार, प्रेम करो न! मैं इतना कहूंगा कि हम जिस देश में बसते हैं वहां प्रेम का एक ही दिन नहीं होता, तीन सौ पैसठ दिन होते हैं! फिर भी अच्छा है कि तीन सौ पैसठ दिन नहीं तो एक दिन कीजिए! पोझिटीव लीजिए। सभी दिन प्रेम के ही है।

तीन वस्तु आप प्रतीति योग्य हो तो कीजिए। गुजराती में तीन शब्द है एक, जीओ। खूब जीओ, भरपूर जीओ। जीते ही है तो खूब जीए। तखतदान याद आते हैं-

मोजमां रे'वुं, मोजमां रे'वुं, मोजमां रे'वुं रे...
अगम अगोचर अलखधणीनी खोजमां रे'वुं रे...

एक फिलम गीत सुनाऊं?

आगे भी जाने ना तू पीछे भी जाने ना तू,
जो भी है बस यही एक पल है...

यह कीर्तन है, यदि आप का अच्छा स्वभाव है। चाहे कितनी बारिश होती है पर आकाश को फूल नहीं आते, नहीं तो वहीं पानी है। पथ्थर को भी फूल नहीं आते। उसी तरह अपना स्वभाव ही चिड़चिड़ा हो तो किसी भी वातावरण में आनंद नहीं मिलता। करोड़ो रूपये की गाडी हो पर कमर दुखती हो तो बैठने का सुख नहीं मिलता। ऐसे बहुत ही अच्छा सूत्र हो लेकिन चिड़चिड़े स्वभाववाले को ब्रह्मा भी नहीं समझा सकते। नहीं तो फिलम की पंक्ति भी मार्गदर्शक बन सकती है। शास्त्र कहता है, अतीतानुसंधान छूट जाय, भूतकाल का त्याग कर दे। नरसिंह गाते हैं-

जे गमे जगद्गुरु देव जगदीशने;
ते तणो खरखरो फोक करवो.

कृष्णमूर्ति का एक वाक्य है, 'भूल कीजिए, खूब कीजिए।' गलतफ़हमी हो जाय! लेकिन उसके बाद का वाक्य समझने जैसा है, 'बार-बार मत कीजिए।' अनुभव होने के बाद रिपिट मत कीजिए। आगे क्या होगा, क्या पता? हरि आगे जो भी करे पर वर्तमान का लुत्फ उठाए। इस पल को जी ले। मरे नहीं हैं अत: जीवित है और जीते है तो भरपूर जी लेना चाहिए। तो, एक बात कि जीओ। और दूसरा, देखो, बराबर देखो। और तीसरा, जाईए।

मेरे युवा भाईओं-बहनों, जीओ, देखो, जाओ। जितना जीओ सत्य के साथ जीओ। दूसरों को देखो तो प्रेम से देखो। करूणा फैलाकर जाओ। जितना जीओ सत्य के साथ जीओ। हम कहां हरिश्चंद्र है लेकिन हम गलत करे तो पता चलना चाहिए कि हमने गलत किया हैं। फ़िर चाहे हम छिपाने का प्रयत्न करे! नाज़िर ने लिखा है-

जमानानां बधां पुण्यो जमाना ने मुबारक हो,
हुं परखुं पापने मारां, मने एवां नयन देजे।

मैं अपने पाप को पहचान सकूं। सत्य के नजदीक जीऊं। दूसरों को हम नफ़रत और द्वेष से नहीं, प्रेम से देखें। बस, इतना ही करना है। यही अध्यात्म है। सार यही है। मुझे याद आते हैं दंताली के पूज्य स्वामी सच्चिदानंद महाराज, उन्होंने कहा कि प्रेम बालकृष्ण रूप में ही होता है। वह बालक ही रहना चाहिए। नारदजी कहते हैं, 'प्रतिक्षणवर्धमानं।' नारद सूत्र में लिखा है कि प्रेम रोज बढ़ना चाहिए। मुनि सही या स्वामीजी? तो, तुलसी कहते हैं कि प्रेम रोज बढ़ना चाहिए। 'जनम जनम रति रामपद।' पूज्यपाद स्वामीजी कहते हैं कि प्रेम बालकृष्ण ही रहना चाहिए। प्रेम यौवन में आने से कामवासना का प्रवेश होता है। प्रेम बूढ़ा होता है तो व्याधि, अशक्ति और मृत्यु मुंह फाड़े खड़े रहते हैं। प्रेम तो अमर तत्त्व है। अत: प्रेम वृद्धि नहीं होनी चाहिए ऐसा नहीं, पर बालक जैसा निर्दोष होना चाहिए। स्वामीजी का यह दर्शन मुझे बहुत पसंद आया। यह प्रेम है, कोई उपदेश नहीं। परस्पर देखें तो प्रेम से देखें। आंख बहुत बड़ा प्रमाणपत्र है।

तो, आज वेलेन्टाइन डे है। मैं आप को न नचाऊं तो भी आप शाम के बाद नाचनेवाले है ही! पर युवा भाईओं, भारतीय संस्कृति का चीरहरण न करना। मेरे सारे संबंधों का केन्द्र युवा है। गुरुजनों से तो मार्गदर्शन लेता हूं। हमें पता चल जाय कि आंख भिखारी है, शिकारी है या पूजारी है। किसी साधु-संत को पहचानने के लिए वेश मत देखिए। वह एक परिचय है। उसकी महिमा है। पर आंख देखिए। आंख उपासना का केन्द्र है। मनुष्य सब के साथ रहता है पर भीतर से ज्यादा किसके साथ रहता है इसका पता आंख से चलता है। गोपीजन कहते हैं, 'प्रेमविक्षणम्।' हे गोविंद, आप ने मेरी आंख में प्रेम के अलावा कुछ ओर नहीं देखा है। देखें तो प्रेम से। आंख की बड़ी महिमा है।

तेरी आँखो के सिवा दुनिया में रक्खा क्या है...

मैंने बहुत फिल्में देखी है! लड़कें, आप भी देखियेगा। फिल्में देखें पर उसकी अच्छाई लेनी चाहिए। जिससे अच्छे संस्कार मिले या तो हमारे दबे हुए मूल्य विकसित हो, ऐसे संगीत का आनंद लीजिए। नृत्य देखिए पर प्रेम से देखिए। आदमी की आंख से उसका पूर्ण परिचय मिलता है।

जीए तो सत्य की नजदीक जीए। दूसरों को प्रेम से देखें। नफ़रत, घृणा, उपेक्षा से नहीं। दुनिया छोड़कर जाय तो बुद्ध की तरह करुणा से बिदा ले। एक युवक ने पूछा है, 'हनुमानजी की मूर्ति पर तैल क्यों चढ़ाया जाता है? यह तैल गरीबों के लिए उपयोग में ले तो कितना अच्छा है?' सही है। हनुमानजी को तेल की जरूरत ही नहीं है। स्निग्ध पदार्थ को संस्कृत में 'स्नेह' कहते हैं; तुलसी ने इसकी स्पष्टता 'विनयपत्रिका' में यों की है कि आप हनुमानजी को तैल चढ़ाना चाहते हैं तो देखिए कि वह तैल किसी गरीब के भोजन का न हो। तुलसी वहां 'स्नेह' शब्द का उपयोग करते हैं। 'विनय' का पद-

बंदउ रामलखन बैदेही।
ये तुलसी के परम सनेही।।

यहां 'स्नेह' शब्द है। तैल गरीबों को दीजिए।

एक दूसरा प्रश्न, 'आज शनिवार है तो हनुमानजी का दिन होने की वजह से क्या बाल नहीं कटवा सकते? नाखून नहीं काट सकते? सिर में तैल डाल सकते? आप का क्या मत है?' मैं कहता हूं, इतनी छोटी-छोटी बातों में क्यों पड़ते हो? आप शनिवार को बाल कटवाए तो क्या हनुमानजी नाराज हो जाए? क्या वे तुम्हारे बाल-दाढ़ी ही देखने बैठे हैं? तुम्हारी श्रद्धा में हस्तक्षेप करना नहीं चाहता। बाकी बाल कटवाने में क्या आपत्ति है?

तो बाप, आप सब को यह प्रेमपर्व मुबारक। प्रेम तो भक्ति का पर्याय है। प्रेम तो परमात्मा का रूप है।

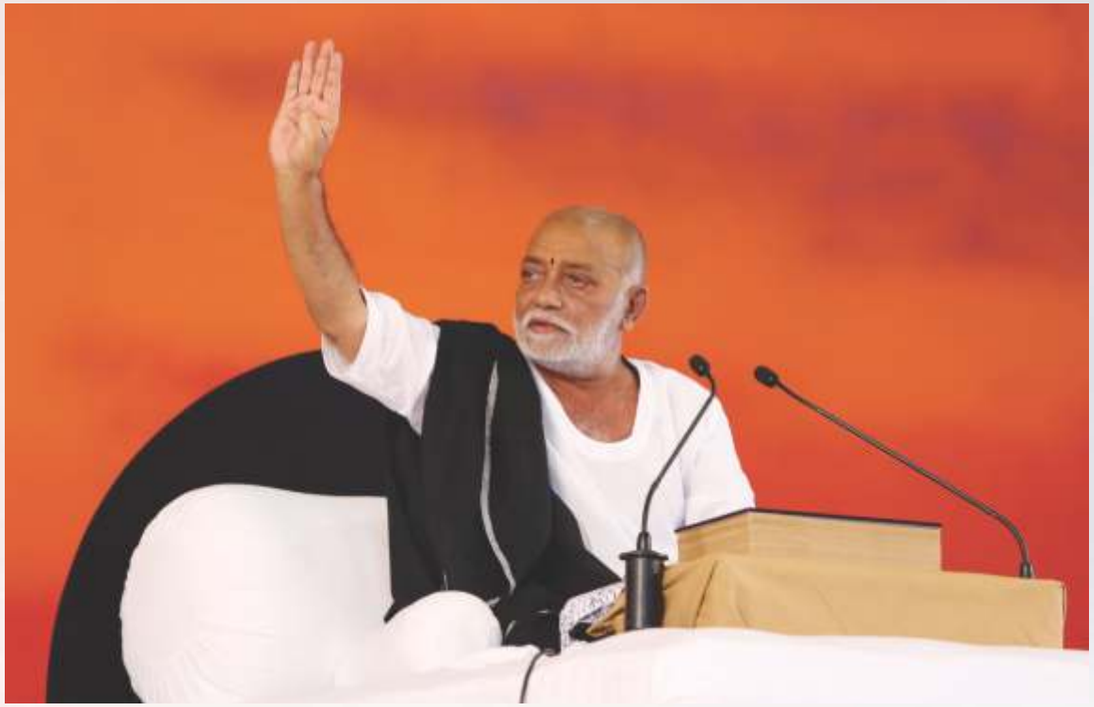

जिसस कहते थे, प्रेम ही परमात्मा है। प्रेम के सभी दिन है, कोई एक दिन नहीं। तो 'मानस-रामकृष्णहरि' इस कथा का केन्द्रीय विचार है। आज थोड़ा हरितत्त्व के बारे में सोचे। हरि का सीधा-सादा अर्थ है विष्णु। हरि मानी नारायण। तुलसी के 'रामचरित मानस' में से हम थोड़ा विशेष मार्गदर्शन प्राप्त करने का प्रामाणिक प्रयत्न करे। हरि के साथ जुड़े कई शब्द हमारे मार्गदर्शक बन सकते हैं। तुलसी कहते हैं, हरि व्यापक है। सौराष्ट्र में कहीं भी भोजन करने जाय खास कर अन्नक्षेत्र में तो भोजन को 'हरिहर' कहते हैं। हरि व्यापक है तो उसमें मेरा-तेरा का भेद नहीं होता। एक ऐसे विष्णु की बात है। 'मानस' में अभिप्राय की बात है। राम को विष्णु का अवतार माने तो तुलसी स्वीकार कर कहते हैं, राम एक ऐसा आदि-अनादि तत्त्व है जिसमें से अनेक विष्णु प्रगट होते हैं। तुलसी के राम मानव भी है, ईश्वर भी है।

तुलसी ने 'मानस' में 'चरित्र', 'लीला' और 'कथा' तीन शब्द प्रयुक्त किए हैं। तीनों पर्यायवाची है। पर ग्रन्थ के मूल रूप को देखें तो तीनों की अर्थछाया अलग-अलग है। चरित्र का अर्थ मानवीय व्यवहार है। जिसका अच्छा व्यवहार वह चरित्रशील है। राम के व्यवहार को लेकर कोई मतभेद नहीं है। हम व्यावहारिक प्रसंगों में ऐसा व्यवहार रखें। 'वाल्मीकि रामायण' में भी परम उत्तम मनुष्य का वर्णन है। वह मानवीय राम है। पर तुलसी के राम केवल मानव नहीं, ईश्वर भी है। इसीलिए उनकी लीलाएं है। हम द्विधा में पड़ जाते हैं। लीला में कईओं को संदेह होता है। सती को भी संदेह हुआ है। 'कथा' कलियुग के लिए उत्तम शब्द है। कथा वह है, जो ईश्वर का मनुष्यत्त्व स्थापित करे। इसीलिए तुलसीदास 'हरिचरित्र' भी कहते हैं। अपने यहां 'हरिलीला' भी कहते हैं। 'हरिकथा' शब्द भी है। तुलसी कहते हैं-

हरि अनंत हरि कथा अनंता।
कहहिं सुनहि बहुबिधि सब संता।।

हरि मानी जो अनंत है वह। चाहे नदी का प्रवाह क्षीण हो जाय पर जिस नदी का अंत ही न हो ऐसी किसी नदी का दर्शन कीजिए। उसे हरि समझिए। गंगा को हमनें 'हरिरूपा' कही है। शायद इसीलिए वह हरिचरण से निकली हैं। आकाश अनंत है, अखंड है तो आदमी के रूप में वह हरि है। अंगद रावण की सभा में कहता है, 'हे दशानन, तेरी सभा में मैं अपना पांव गड़ाता हूं। तेरी सभा में तुझ सहित कोई भी इस पांव को हिला दे तो राम लौट जाय और मैं सीता को हार जाऊं।' इतना बड़ा अधिकार एक राजदूत को किसने दिया? अन्य बंदरों ने इस पर प्रश्न उठाया। यद्यपि 'मानस' में यह लिखा नहीं है। पर शास्त्र गुरुमुखी होता है। बंदरों ने पूछा कि तेरा पांव किसीने उठा लिया होता तो? तब अंगद ने हंसते-हंसते कहा, 'सीता राम की है। इसकी चिंता मुझे नहीं करनी है। वह चिंता राम की है।' इस अनंत विश्वास का नाम 'हरि' है। सुरदास याद आते हैं-

दृढ इन चरनन केरो भरोसो, दृढ इन चरनन केरो,
श्री वल्लभ नख चन्द्र छटा बिन, सब जग मांहे अंधेरो ...

भजन की महिमा बहुत है। साहब, लोग तलाजा से सुरत की रात्रि बस में एक दूसरें के कंधे पर सिर रखकर सो जाते हैं। क्यों? क्योंकि उन्हें भरोसा है कि ड्राइवर जगता है। 'हरि' शब्द का तीसरा अर्थ अवतार ले उनको हरि कहते हैं।

हरि अवतार हेतु जेहि होई।

हरि अवतार ले। इन के कार्यक्षेत्र में यह वस्तु आती है। अवतार में व्यापकता समाई रहती है। जो व्यापक हो वही अवतार ले सकता है। अनंत ही अवतार लेते हैं। समस्त ऐश्वर्य को एक ओर रखकर हमारे साथ पिता-पुत्र बात करे, ऐसे बात करे वह अवतार है।

तुलसीदासजी ने 'हरि' शब्द भजन के साथ जोड़ा है। 'बिनु हरिभजन न भव तरिय।' भजन हरि है। भजन गाइए, लिखिए, कम्पोझ कीजिए कि जो भी भजन की विद्या हो वह हरि है। इन सब के साथ व्यापकता और अनंतता का स्मरण रखना। भजन संकीर्ण नहीं होता। भजन का एक अर्थ है सेवा। और में कहूं, भजन तो भगवान का भी बाप है। भजन करने के बाद ही भगवान मिले हैं। अत: शंकर भगवान ऐसा बोले कि-

हरि व्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।

अत: भजन की काफ़ी महिमा है। गंगासती को याद करूं तो 'जेने सदाये भजननो आहार।'

तो, 'मानस' के आधार पर हम हरि के कई अर्थ निकाल सकते हैं। भगवान राम के अवतार के जो कारण बताए हैं वह हरि मानी विष्णु वृंदा प्रकरण में दिखाई देते हैं। और हरि मानी विष्णु वह नारद प्रकरण में दिखाई देते हैं। जय-विजय के प्रकरण में भी केन्द्र में विष्णु है। प्रतातभानु के प्रकरण में ऐसी स्पष्टता नहीं है। परंतु मनु-शतरूपा की बात आती है वहां हरि गौण बनते हैं और ब्रह्म ही प्रगट होते हैं। ऐसे राम प्रगट हुए। तुलसी कहते हैं, उस राम में से अनेक विष्णु, अनेक शिव, अनेक ब्रह्मा प्रगट हो सके। तो, हरि के अवतार को इदमित्थ कोई नहीं कह सकता।

कथा क्रम आगे बढ़ाएं। 'अयोध्याकांड' का आरंभ होता है। युवा भाईओं-बहनों, सुनिए। 'अयोध्याकांड' में मंगलाचरण का पहला मंत्र तुलसीदासजी ने शंकर-पार्वती की वंदना करते लिखा है। पूज्यपाद डोंगरे बापा से सुना है कि 'बालकांड' मानव की बाल्यावस्था है। 'अयोध्याकांड' युवावस्था है। इस अवस्था में आदमी टंटा-फ़िसाद करके अपनी ऊर्जा को

खर्च न डाले ऐसी युवानी का नाम 'अयोध्याकांड' है। 'अयोध्याकांड' को सुंदर बनाना हो तो आप चाहे किसी भी संप्रदाय के हो, धर्म के हो पर शंकर का स्मरण तो करना ही होगा। यौवन का जतन कैसे हो इसका शिक्षण शंकर देते हैं। इसीलिए तुलसी ने मंगलाचरण में शिववंदना की। एक बात समझ लीजिए, शिव शिव है। मैं गाता हूं राम को, लेकिन राम से भी ज्यादा मानता हूं शंकर को। उन जैसा कोई देव नहीं है। भगवान शंकर रास के भी देव है और ह्रास के भी देव है। शिव का अर्थ कल्याण है। कौन-सा धर्म कल्याण का इन्कार कर सके? महादेव की स्तुति युवाओं को बहुत पथप्रदर्शक है। इसलिए प्रथम श्लोक-

यस्याङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्।
सोऽयं भूतिविभूषण: सुरवर: सर्वाधिप: सर्वदा
शर्व: सर्वगत: शिव: शशिनिभ: श्रीशङ्कर: पातु माम्।।

युवा भाईओं-बहनों, मंगलाचरण में शिव वंदना कर तुलसी यों कहना चाहते हैं कि यौवन में तुम्हारा ब्याह होगा। शिवजी की बायीं ओर ज्यों हिमालयपुत्री बिराजमान होती हैं, ऐसा सरस दाम्पत्य रखना। तुम्हारी धर्मपत्नी को ऐसा आदर देना। हृदय के पास बिठाना। शंकर की जटा में से गंगा निकलती है। इसी तरह तेरी बुद्धि में विवेक की गंगा रखना। यह युवाओं को संकेत है। शंकर के भाल पर बालचंद्र है। युवक, संयम से तेजवृद्धि होगी। तेरी भाल पर तप का तेज रखना। पर वह पूर्ण चंद्र नहीं क्योंकि पूर्णचंद्र को कृष्णपक्ष लागू होगा। 'अभी मुझे विकसित होना है', ऐसा तेरे यौवन में संकल्प रखना। महादेव ने ज़हर पीया है। तुझे यौवन में काफ़ी सहन करना पड़ेगा। तब विष को कंठ में रखना। 'नीलकंठ' बनना। आभूषण पहनना। पर वह आभूषण भुजंग न बन जाय इसका ध्यान रखना। शरीर की भस्म संकेत करती है की यह काया भी एक दिन भस्म हो जाएगी। अत: तू निराश न हो। नाशवंतता का स्मरण रखना। कल्याणकारी विचार रखना। इस तरह 'अयोध्याकांड' का आरंभ मार्गदर्शक है।

दूसरे मंत्र में, भगवान राम को राज्याभिषेक होने के समाचार मिला पर उनके चेहरे पर प्रसन्नता नहीं आई। दूसरे सामाचार चौदह बरस बनबास जाने के मिले तो ग्लानि नहीं हुई। सफलता-निष्फलता जीवन में आया करेगी। हे युवक, तू शिव की तरह राम चेहरे पर सम्यक् रहना। 'अयोध्याकांड' के प्रारंभ में लोकबोली में पहला दोहा-

श्री गुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनउ रघुबर बिमल जसु जो दायकु कल चारि।।

'रामचरित मानस' में लोकभाषा में लिखा हुआ 'अयोध्याकांड' का यह पहला दोहा। यौवन को मार्गदर्शक की जरूरत होती है। कहीं हम भटक न जाए। गुरु मानी मार्गदर्शक।

गुरुवंदना के बाद कथा आगे बढ़ती है। तुलसी ने 'अयोध्याकांड' के प्रथम प्रकरण में सुख की चर्चा की है। सुख अच्छी वस्तु है। तुलसी संकेत देते है कि अति सुख वनवास को न्यौता देता है। प्रामाणिक पुरुषार्थ और परमात्मा की कृपा से अत्यंत सुख मिले तो उसे होश के साथ उपयोग करने का शिव संकल्प होना चाहिए। मूसलाधार बारिश के बाद धूप जरूरी है।

एक दिन महाराज दशरथजी राज्यसभा में बिराजमान हैं। उन्होंने दर्पण लिया। अपना चेहरा देखा और अपने मुकुट को ठीक किया। इस प्रसंग पर मेरी व्यासपीठ ने बहुत कहा है। सभा के बीच महाराज मुकुट ठीक करते हैं। यह एक ही बार हुआ है। आज जब चारों

ओर से 'वाह वाह' होती है तब मैं इस 'वाह वाह' के लायक हूं, यह मनदर्पण में देख लेना चाहिए। समाज जब बहुत प्रतिष्ठा दे तब साधक को मन दर्पण में निज दर्शन करना चाहिए कि मुझे जो प्रतिष्ठा मिली है, यह मुकुट मुझे मिला है यह एक ओर झुक तो नहीं गया? यह मेरा-तेरा ऐसा भेद तो नहीं करता है? मन के दर्पण में देखकर बुद्धि को सम रखने की सूचना देने में आई है।

तुलसीदासजी कहते हैं कि दर्पण में देखते-देखते दशरथजी को कान के पास सफ़ेद बाल दिख पड़े। दशरथजी ने विचार किया कि मेरा बूढ़ापा मेरे कान में गुरुमंत्र देने आया है। मैं बार-बार कहता रहता हूं कि बूढ़ापा आए, बाल सफेद हो तब ज्यादा खिच-खिच न करें। लड़के गलती करे तो प्रेम से सलाह देनी चाहिए। समाज के सभी दशरथों को त्याग हेतु यह मार्गदर्शन है। अब दशरथ राम को राज्य देने का विचार प्रस्तुत करते हैं।

आपको लगे तो तीन वक्तु कीजिए। युवा भाईओं-बहनों, गुजराती में तीन शब्द है- जीओ, देखो और जाओ। जीओ तो जितना जी सको सत्य से जीओ। और दूसरों को प्रेम से देखो। और जाओ तो इस दुनिया में करुणा फैलाकर जाओ। जितना हो सके सत्य के साथ जीओ। और दूसरों को हम देखें तो नफ़रत-द्वेष से नहीं, प्रेम से देखें। बस इतना ही करना है। दूसरों को प्रेम से देखे; नफ़रत, घृणा से नहीं। और जायें तब बुद्ध की तरह करुणा से बिदा ले।

आप गुरुपरंपरा में मानते हो तो त्याग या संग्रह का निर्णय गुरु से पूछे बिना मत करना। संग्रह या त्याग की पहचान कोई बुद्धपुरुष करवाते हैं।

दशरथजी वशिष्ठजी के द्वार गए। वशिष्ठजी ने उसी समय राम को युवराजपद देने की सहमति दे दी। दशरथजी ने मुहूर्त पूछा। वो बोले, 'जब देना ही हो तो मुहूर्त देखने की जरूरत नहीं है। जिस समय दे वह शुभ समय होता है।' ठाकुर परमहंस के पास एक आदमी आया। ठाकुर ने कहा, ये पैसे गंगाजी में डाल दे। वह आदमी गया। घंटे के बाद लौटा। ठाकुर ने देरी का कारण पूछा। उसने कहा, 'मैं गिन-गिन कर डालता था!'ठाकुर ने कहा गंगा में डालने ही थे तो गिनने की क्या जरूरत थी?

बाप, त्याग का निर्णय लिया गया। परंतु हुआ ऐसा कि व्यवस्था के नाम पर कल ही दशरथजी को कल राज्याभिषेक करने का निर्णय लिया। जो कल पर टाला और बीच में रात आई वह ममता की थी और कैकेयी की ममता ने एक धूर्त का कुसंग किया। उसी में से राम बनवास का जन्म हुआ। कुसंग के कारण ममत्व उभरा। मंथरा कैकेयी की बुद्धि घूमा देती है। कैकेयी मानी संत भरत की माता। कुसंग एक माता की बुद्धि को भी घूमा सकता है तो मेरी-आप की क्या हैसियत? इसलिए कुसंग से सावधान रहिए।

राम बनबासी बने हैं। सुमंत रथ लेकर तमसा तट पर छोड़ने आए हैं। वहां रात्रि मुकाम कर, नौका में बिठाकर तुलसीजी राम को चित्रकूट पहुंचाते हैं। तुलसी चित्रकूट को चित्त का दरज्जा देते हैं। मन कुसंगी बने, बुद्धि विपरीत हो और अहंकार परेशान करे तब चित्रकूट ही इसका इलाज है। राम की यात्रा चित्रकूट पहुंचती है। आज की कथा भी मैं वहीं रोकता हूं।

मानस-रामकृष्णहरि
।। ९ ।।

राम परमार्थरूप है, कृष्ण पुरुषार्थरूप है
और हरि प्रसन्नतारूप है

कथा के आरंभ का उपक्रम सेवाभावी संस्था की वंदना करने का है। आज जिस सेवाभावी संस्था और उनके संचालकश्री की हमने वंदना की। उन्हें मेरा नमन। रामकथा के साथ-साथ एक विचारयज्ञ भी चल रहा था। आज जिन्होंने निर्भीकता से, मुक्तमन से अपने विचार स्पष्ट रूप से व्यक्त किए ऐसी शरीफाबहन। मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। गोविंदकाका ने तो सबका आभार माना। मैं भी इस प्रेमयज्ञ में जुड़ी सभी आहुतियों को प्रणाम करता हूं। मैं अपनी प्रसन्नता सबको लेकर व्यक्त करता हूं। 'रामायण' में एक शब्द है; जनकराजा की रंगभूमि की व्यवस्था देखकर विश्वामित्र महाराज ऐसा कहते हैं कि 'मिथिलेश जनक, भली रचना।' यह मोरारिबापू का प्रमाणपत्र नहीं, प्रेमपत्र है।

बाप, 'मानस-रामकृष्णहरि', कथा का केन्द्रीय विचार है। अंतिम सूत्र मुझे मेरे गुरु उसके प्रेरित करे इससे पहले कल हमने देखा कि राम चित्रकूट गए। और बाद में दशरथजी की मृत्यु होती है। भरतजी आते हैं। पिता का संस्कार होता है। भरतजी माँ कैकेयी पर बुहुत नाराज है। सभा का आयोजन होता है। राजगद्दी का क्या? बहुत बड़ा निर्णय लेने का है। तब सभी ने भरतजी को एक सूर में कहा कि पिता जिसे राज्य दे वह वारिस माना जाता है। पिता की आज्ञा मान्य रख आप राज्य का स्वीकार कीजिए। तब भरतजी गीली आंखों से कहते हैं, किसी को ग्रह की पीड़ा होती हो, और फिर बात प्रकोप होता है, इस पर बिच्छू काटे, फिर कोई ऐसे में शराब पिला दे, उस आदमी की दशा क्या होती है? मेरी ग्रहदशा ठीक नहीं है। मुझे लेकर राज्य की चर्चा हुई। मेरी माँ के लिए वायुरोग सिद्ध हुआ। पिता की मृत्यु बिच्छू डंक है। इस पर राज्यसत्तारूपी शराब मुझे पिला रहे हैं? भरत के दो सूत्र दुनियाभर की सल्तनीत सीखें। भरत कहते हैं, मैं सत् का मानव हूं, सत्ता का नहीं। मैं पद का नहीं, श्रद्धेय पादुका का मानव हूं। आपका मेरे प्रति प्रेम हो तो हम सब मिलकर राम के पास जाय। मेरे ठाकुर जो कहेंगे मैं करूंगा। भरत के वचन स्वीकार्य बने। अयोध्या के लोगों को जीने का अवलंबन प्राप्त हुआ। इसी बहाने राम से मिलेंगे। पूरी अयोध्या यात्रा पर निकलती है। भरत की चित्रकूट यात्रा के अमुक विघ्न है। व्यासपीठ मानती है कि ये साधक की परमप्रेम तक पहुंचने की यात्रा के विघ्न है।

भरतजी का समाज चित्रकूट पहुंचता है। सब मिलते हैं। पिता की मृत्यु के समाचार दिए। नरलीला करते प्रभु की आंख में आंसू आए। कोल-किरात-भीलों ने एक प्रेमनगर बसाया। जनकजी भी पूरी मिथिला को लेकर चित्रकूट आए हैं। दो समाज एकत्र हुए हैं। खबर-अंतर पूछे हैं। शोक व्यक्त हुआ। रात होने पर कौशल्याजी जानकीजी को

कहती है, 'तू माता-पिता को मिल आओ।' वह जाती है। परमज्ञानी पुरुष जनकजी उस दिन जानकीजी को देखकर बोले हैं, 'जानकी, 'पुत्री पवित्र किए कुल दोउ।' बेटा एक कुल को पवित्र करता है, तुने हमारे दोनों कुल पवित्र कर दिए हैं।' यह था अपने यहां मातृशक्ति का सन्मान। इस में से आज हम कहां पहुंचे हैं?

किसी ने आज प्रश्न पूछा है कि माता-पिता पुत्र के साथ ही रहे; ऐसा ही अधिकार पुत्री को मिले तो कई समस्याएं हल न हो जाय? अच्छा विचार है। शायद बाप को भी पसंद आए। तो बाप, अहोभाव से भर जाते हैं। जानकी भी उन्हीं की पुत्री है। आधी रात हो गई है। सभी वन में ही है। फिर भी सीता संकोच अनुभव कर रही है। सुनयना ने पूछा कि तू क्या संकोच अनुभव कर रही है? तब सीता ने कहा, माँ, मेरी सासें यहां हो तब तुम्हारे पास रुक जाना उचित नहीं है। मुझे मेरे ठिकाने पर छोड़ आइए। एक-एक पात्र जो कर्तव्य धर्म का निर्वहण करते हैं! मैं आपसे एक बात कहूं कि ऐसी महान कथा जहां कोई भी परमतत्त्व की चर्चा चलती हो; ये केवल रामकथा तक सीमित न रहे।

तू अगर मंदिर में है तो मस्जिद मैं कौन?

तू अगर बस्ती में बसता है तो वीरानों में कौन?

किसी भी परमतत्त्व की चर्चा रामकथा है। अपने जीवन में इस कथा का परिणाम जितनी मात्रा में आना चाहिए उतना क्यों नहीं आता? कारण यह है कि हम में कुछ कम है। वह है कर्तव्यधर्म। हम श्रवण तो कर लेते हैं। 'श्रोता सुमति', आदमी सुमति से सुने। आकाश में से बरसता पानी मिट्टी पर गिरे तो गंदा हो जाता है। पथ्थर पर गिरने से बह जाता है। तुलसीदासजी कहते हैं -

सुमति भूमि थल हृदय अगाधु।

सद्बुद्धि से कथा कहनी चाहिए, सुननी चाहिए।

हृदयरूपी गहन सागर में ये सूत्र एकत्र हो और हमें कर्तव्यबोध प्राप्त हो। बहुत हुआ साहब! कई परिवर्तन होने चाहिए। शास्त्र नाराज नहीं होंगे। संशोधन करना चाहिए। यदि हम साहस करे तो कट्टर न बने, दृढ बने। हमें दृढ होना पड़ेगा। हम जगत को जवाब न दे सके? मैं निराशावादी नहीं हूं। मैं प्राइमरी स्कूल में पढ़ा रहा था इसलिए मुझे पता है, पैंतीस प्रतिशत पर उत्तीर्ण होते हैं। पैंतीस प्रतिशत परिवर्तन हो रहा है। एक शिक्षक के तौर पर कह सकता हूं, शत प्रति शत तक पहुंचना है। संपूर्ण उत्तीर्ण होना है। और यह होगा।

आपणे आपणा धर्म संभाळवा,
कर्मनो मर्म लेवो विचारी...

- नरसिंह मेहता

'रामायण' में एक-एक व्यक्ति अपने कर्तव्यबोध का निर्वहण करती है। सीताजी रुकी नहीं, चली गई। दिन बीतने लगे। कोई निर्णय अयोध्या को लेकर नहीं हो पा रहा है। आखिर में भरत पर छोड़ा गया। दबाव न करना प्रेम का स्वभाव है। भरत कहते हैं -

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।
करुना सागर कीजिअ सोई।।

हे प्रभु, हम तुम्हारे हैं। हमने आप से प्रेम किया हो तो मेरा मन प्रसन्न रहे। ऐसा कोई भी निर्णय हमें कबूल है। निर्णय हुआ कि भरत अयोध्या रहे। राम बन में रहे। बाद में देखा जायगा। बिदा लेते समय गीली आंखों से भरत को लगा कुछ कमी है। रामजी समझ गए कि भरत को चौदह साल जीवन टिकाने के लिए आधार चाहिए। 'मानस' का प्रसिद्ध प्रसंग है -

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

भगवान ने कृपा कर पांवरी दी। भरतजी ने शिरोधार्य की। भरत को आनंद हुआ कि पांवरी मिली है तो पैर भी लौट कर आयेंगे। अवलंबन है कि राम लौटकर आयेंगे। भक्त और प्रेमी एक अवलंबन चाहते हैं।

महेबूब की हर चीज महेबूब होती है।

भरतजी पांवरी लेकर अयोध्या आते हैं। राज्य की व्यवस्था करते हैं। विश्ववंद्य गांधीजी के ट्रस्टीशीप के सिद्धांत की स्थापना यहां हुई है। थोड़े दिनों के बाद जनकजी मिथिला गए। एक दिन भरत माँ कौशल्या के पास आए। संतों का मत है कि दशरथजी की मृत्यु के बाद राम बनवास के बाद कौशल्याजी राजभवन के अपने कक्ष में नहीं गई। अपने शयन कक्ष के बाहर अयोध्या की महारानी एक चटाई बिछाकर बैठती है, वहीं पर सो जाती है। भरतजी आकर पूछते हैं, माँ, एक बात कहूं? इससे पूर्व भरतजी ने वशिष्ठजी की इज़ाज़त ले ली है कि गुरुदेव, मेरी इच्छा है कि राम बन में रहे तो मैं नगर में कैसे रहूं? मुझे नंदिग्राम में कुटिया बनाकर रहना है। मैं वहीं से राज्य का संचालन करूंगा। वशिष्ठजी ने कहा, भरत, मुझे इतना ही कहना है, हम जो कहते हैं वह धर्म है, परंतु तुम जो निर्णय लेते हो वह धर्म का सार है। वशिष्ठजी ने ऐसी प्रसन्नता व्यक्त की। भरतजी माँ के पास आए हैं, 'माँ, मेरा जन्म तुझे दु:ख देने के लिए हुआ है!' 'फिर वही बात?' 'माँ, मैं नंदिग्राम में रहूं? मुनिव्रत धारण करूं?' रामजननी चूप है। यह महिला धर्म और स्नेह दोनों को जानती है। माँ को लगा, इस पुत्र को उसकी इच्छानुसार नहीं जीने दूंगी तो चौदह वर्ष तक जीवित नहीं रहेगा। कहा, 'तू प्रसन्न रहे तो जा।'

मंत्रीमंडल आ गया है। राजपुरोहित खड़े हैं। निर्णय हो गया कि भरत नंदिग्राम जायेंगे। मेरी व्यासपीठ को लगता है, उस समय एक पात्र ऐसा है जो राजभवन का खंभा पकड़कर मौन धरे, आंख में आंसू लेकर वह व्यक्ति खड़ी है। कौशल्या ने कहा, शत्रुघ्न, धैर्य रखो। यह

तो मौन धारण करनेवाला पात्र है। माँ ने बहुत कहा तब शत्रुघ्न बोले हैं, 'मेरे पिता स्वर्ग में, राम-लखन-जानकी वन में और अब भरत नंदिग्राम जा रहे हैं। मैं कहां जाऊं?' यह प्रेम की कशमकश है। माँ ने इतना कहा कि शत्रुघ्न, सूर्यवंश के वंशज को तपना ही चाहिए। 'धर्म का फल पीड़ा है।'-'महाभारत।' 'रामायण' में एक-एक पात्र बलिदानी पात्र है। तुलसीदासजी भरत को नंदिग्राम निवासी कर 'अयोध्याकांड' पूरा कर देते हैं।

'अरण्यकांड' में राम स्थलांतर करते हैं। चित्रकूट से निकलकर राम अगस्त्य ऋषि के आश्रम में

आए हैं। अत्रि और अनसूया ने स्वागत किया है। तुलसीदासजी ने ग्राम्य भाषा में स्तुति लिखी है -

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

अनसूया ने दिव्यवस्त्र और आभूषणों का दान सीता को किया। वहां से आशीर्वाद लेकर यात्रा आगे बढ़ती है। मुनियों से मिलते-मिलते राम कुंभज ऋषि के आश्रम में आए हैं। वहां से पंचवटी जाने का निर्देश मिला है। राम-लक्ष्मण-जानकी रास्ते में पितृसखा जटायु से मिलते हैं। पितातुल्य आदर देकर भगवान पंचवटी में गोदावरी तट पर निवास करते हैं। लक्ष्मणजी के पांच प्रश्नों के रामजी आध्यात्मिक उत्तर देते हैं।

शूर्पणखा का प्रवेश होता है। दंडित होती है। जाग्रत लक्ष्मण को, जैसे साधक को पथभ्रष्ट करने शूर्पणखारूपी वासना आती है। खर-दूषण को पता चलता है। तुमुल संघर्ष होता है। भगवान खर-दूषण को निर्वाण देते हैं। शूर्पणखा ने लंका जाकर सारी बातें बताई। रावण विचारशील महात्मा है। तुलसी का रावण अवतार है। रात के समय चिंतन करता है। मेरे समान ही शक्तिशाली खर-दूषण थे। भगवंत के बिना कोई न मार सके। क्या भगवान का अवतार हो चुका है? हो चुका है तो मैं भजन तो नहीं करूं पर उसके साथ बैर बांधू और हरि के हाथों निर्वाण प्राप्त करूं। दंभ नहीं करना है। रावण ने ऐसा कदम उठाया है। सीता अपहरण की योजना बनी। मारीच का साथ लिया। ये सब अद्‌भुत प्रसंग है। सीता अपहरण, जटायु की शहादत। रावण जानकी को यत्नपूर्वक अशोकवन में रखता है। राम सीता के वियोग में नरलीला करते हैं। राम रोते हैं। राम को रोना ही चाहिए। यहां मानव तत्त्व है। खोज शुरू होती है। जटायु निर्वाण होता है। सीता खोज की यात्रा आगे बढ़ती है।

भगवान, कबंध को निर्वाण देकर शबरी के आश्रम में आए। राम की पूरी यात्रा सुधारने की नहीं है, स्वीकारने की है। उन्हीं के नक्शे कदम में इतना सीखा हूं कि सुधारने का प्रयत्न मत कीजिए। सबका स्वीकार कीजिए। एक बार प्रेम से स्वीकार करेंगे तो सुधार अपनेआप हो जाएगा।

निषेध कोईनो नहीं, विदाय कोईने नहीं.
हुं शुद्ध आवकार छुं, हुं सर्वनो समास छुं.

- राजेन्द्र शुकल

यह राम की यात्रा है, स्वीकार यात्रा है। नौ प्रकार की भक्ति शबरी को निमित्त बनाकर हम तक पहुंचाने का राम ने प्रयत्न किया है। राम ब्रह्म है। बिदा लेते समय शबरी से पूछते हैं, 'मुझे सीता कब मिलेगी?' राम शबरी का मार्गदर्शन लेते हैं। यहां राम मानव से महामानव बनते हैं। राम पंपासरोवर आए। नारद आते हैं। भगवान विरह विह्वल है। यहां तुलसी 'अरण्यकांड' पूरा करते हैं।

'किष्किन्धाकांड' में राम-सुग्रीव की मैत्री हनुमानजी के माध्यम से होती है। बाप, तुलसी ने 'विनयपत्रिका' में इसका आध्यात्मिक अर्थ देते हुए कहा है कि सुग्रीव जीव है और वालि कर्म है। सुग्रीव जहां जाय बालि उसका पीछा करता है। हमारे कर्म हमारा पीछा करते हैं। पर ऋष्यमूक पर्वत पर यानी ऋषि के वचनमें, सत्संग में जीव चला जाय तो कर्म कुछ नहीं कर सकता। अच्छी किताब पढ़िए, यह सत्संग है। अच्छे आदमियों के संग बैठिए यह सत्संग है।

बालि का निर्वाण। सुग्रीव को किष्किन्धा का राज्य। अंगद को युवराजपद। फिर राम प्रवर्षण पर चातुर्मास करते हैं। सुग्रीव ईश्वर का कार्य भूला। फिर ज्ञान हुआ। राम की शरण में आता है। सीता खोज की योजना बनी। सभी दिशाओं में बंदर-भालू की टुकड़ी भेजी। अंगद को नायक बनाकर जिसमें हनुमान भी है, यह टुकडी दक्षिण भेजी गई। स्वयंप्रभा ने मार्गदर्शन दिया। बहुत भटकते पर भी सीता नहीं मिलती। अपनी स्वयंसभा से ही सीता मिलती है। सभी समुद्र तट पर आए। संपाति नामक गीद्ध मिला। उसने बातें बताई। जामवंत की प्रेरणा से हनुमानजी पर्वताकार होते हैं। वयवृद्ध को अनुभव का मार्गदर्शन मिला। 'किष्किन्धाकांड' पूरा हुआ। 'सुन्दरकांड' का आरंभ हुआ।

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई।।

हनुमानजी लंका में प्रवेश करते हैं। सभी जगह घूमे पर सीताजी दिखी नहीं। विभीषण से मिले। विभीषण ने युक्ति बताई। जानकी तक पहुंचे। अशोकवन की घटा में हनुमानजी छिप गए हैं। उसी समय रावण आता है। जीवन है, समस्याएं आयेगी। पर समस्या आए इससे पूर्व थोड़ा ऊंचा देखे तो समाधान पहले से आ चुका होता है। रावणरूपी समस्या आई इससे पहले मेरा हनुमान आ गया था। हम हिंमत हार जाते हैं और परमात्मा पर रखा हुआ विश्वास खो बैठते हैं।

हनुमानजी ने जानकीजी के चरण में राम का सन्देशा दिया। जय वसावडा ने सरस शब्दप्रयोग किया। उन्होंने कहा, हनुमानजी 'प्रेमदूत' है। रामजी का संदेश दिया। फलफूल खाए। लंका दरबार में गए। रावण के साथ वार्तालाप किया। तुलसी ने आध्यात्मिक अर्थ किया कि लंका माने प्रवृत्ति। हनुमानजी त्यागी है। उन्हों ने गलत प्रकार की प्रवृत्तियों का दहन कर दिया। एक भी नगरवासी को जलाया नहीं है। उनकी मान्यताएं जलाई

हैं। हनुमानजी पुनः जानकी के पास आते हैं। माँ का सन्देश राम को दिया। राम ने अभियान चलाया। समुद्रतट पर राम सैन्य सह पहुंचते हैं। यहां रावण की सभा में विभीषण का अपमान होता है। विभीषण प्रभु की शरण में आता है। स्वीकार किया। मार्गदर्शन लिया। प्रभु तीन दिन तक समुद्र के आगे अनशन पर बैठे। तीन दिनों के बाद भगवान ने अपनी शक्ति बताने का संकेत दिया। समुद्र शरण में आया। सेतु बनाने का प्रस्ताव रखा। राम ने स्वीकार किया। उनके जीवन का मंत्र तोड़ो नहीं, जोड़ो का था।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतु निर्माण हुआ है। रामेश्वर की स्थापना हुई। प्रभु सेतु पर से लंका पहुंचे हैं। रावण अपनी मस्ती में है। थोड़ा महारस भंग हुआ है। दूसरे दिन राजदूत रूप में अंगद को भेजा है। संधि नहीं हो पाई। युद्ध अनिवार्य हुआ। रावण का तेज प्रभु के तेज में समा जाता है। मंदोदरी ने राम की स्तुति की। विभीषण को राज्य मिला। सीता-राम का पुनर्मिलन हुआ। फिर पुष्पक में आरूढ होकर अपने सखाओं के साथ अयोध्या आने के लिए निकले हैं।

हनुमानजी से कहा, आप अयोध्या पहुंचकर भरतजी को समाचार दीजिए। हनुमानजी अयोध्या पहुंचते हैं। राम का हवाई जहाज गंगा तट पर उतरा। राम को निःशुल्क गंगापार करानेवाले भील के घर राम गए। क्या उतराई दूं, ऐसा पूछा। केवट रो पड़ा कि आपने मुझे याद रखा! सफलता के बाद भी लघु मानव को याद रखना बड़ी बात है। केवट की इच्छा से प्रभु उसे साथ लेते हैं। 'लंकाकांड' पूरा हुआ।

राम का हवाई जहाज जन्मभूमि सरयु तट पर उतरता है। अयोध्या में खुशी छा गई है। परमात्मा ने जन्मभूमि को प्रणाम किया। हवाई जहाज से उतरने के बाद सभी बंदर मानवरूप में आ गए थे। यह एक विचार है। राम का मिशन है, सभी को मानवरूप देना। राम उतरे। भरत-राम मिलाप पर तय नहीं हो पा रहे है कि बनवास किसका था? राम ने गुरुदेव के पास शस्त्र रखकर दंडवत् किए। अब शस्त्रों की जरूरत नहीं है। मुझे शस्त्रधारी राम नहीं चाहिए। यह जगत शस्त्रमुक्त होना चाहिए। कब तक लड़ते रहेंगे? राम सबसे मिले। अपने एश्वर्य से अमितरूप का प्राकट्य कर सबको अपने-अपने भावानुसार मिलते हैं। फिर भगवान राजभवन की ओर जाकर प्रथम कैकेयी से मिलते हैं। कागबापू -

तारो छे परताप,
आ वनमां विगत लीधी साथ.
माडी ए तारो छे परताप ...

बाप! यह कथा अभी पूरी हो जायगी। मेरी बिनती है कि घर पहुंचकर सबसे पहले उनसे मिलिए जिसके साथ नाराजगी है, ज्यों राम कैकेयी के पास गए थे। कैकेयी माँ का संकोच दूर किया। कौशल्या के पास आए तो कोई बोल नहीं पाया!

वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों से कहा, आज ही राजतिलक कर दे। सब ने कहा, कल का क्या भरोसा। स्नान कर दिव्य अलंकार-वस्त्र धारण किए। वशिष्ठजी से दिव्य सिंहासन मंगवाया। राम सिंहासन के पास नहीं गए हैं पर सत्ता सत् के पास आ गई है। दिव्यसिंहासन पर से सबको प्रणाम कर सीता-राम आरूढ हुए। राम के भाल पर वशिष्ठजी ने प्रेमराज्य देते हुए प्रथम तिलक किया।

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

प्रेमराज्य की स्थापना हुई। देवताओं ने हवाई जहाज में बैठकर आरती उतारी। कैलासपति महादेव को रामराज्य में रस है। वे रामसभा में आए। शिवजी ने स्तुति की। भगवान ने अपने मित्रों को निवास दिए। दिव्य रामराज्य की स्थापना हुई। छः महिने बीत गए। फिर प्रभु ने मित्रों को बिदा दी। सिवा हनुमानजी के सभी सखा बिदा हुए।

तुलसीदासजी को विवाद, दुर्वाद और अपवाद की कथा मंजूर नहीं है। उन्हें संवाद रचना है। अतः सीता के दूसरे बार की त्याग की कथा तुलसी नहीं लिखते। जानकी ने दो पुत्रों को जन्म दिया है, इतना कहकर रघुवंश की कथा पूरी कर दी। फिर तो कागभुशुंडिजी का चरित्र, गरुडजी के सात आध्यात्मिक प्रश्न, भुशुंडिजी ने दिए जवाब इसकी कथा 'मानस' के अंत में है। गरुड ने भुसुंडि से कथा सुनी। गरुड पंख फैलाकर वैकुंठ गया।

> किसी भी परमतत्त्व की चर्चा चलती हो उसे केवल रामकथा के ही अंदर सीमित न करे। किसी भी परमतत्त्व की चर्चा रामकथा है। अपने जीवन में इस कथा का परिणाम जितनी मात्रा में आना चाहिए उतना क्यों नहीं आता? इसकी वजह है कि हम में कुछ कमी है और वह कर्तव्यधर्म की कमी है। सद्बुद्धि से कथा कही जाय, सुनी जाय। और हृदयरूपी विशाल सागर में सूत्र इकट्ठे होते हैं और हमें कर्तव्यबोध होता है। बहुत हुआ, साहब! कई परिवर्तन होने चाहिए। शास्त्र नाराज़ नहीं होंगे। संशोधन करना होगा। और हम साहस करें तो कट्टर न बनें, अड़ग बनें। हमें अड़ग होना पड़ेगा।

यहां याज्ञवल्क्य ने भरद्वाज के पास कथा पूर्ण की या नहीं, स्पष्ट नहीं है। कैलासपति महादेव ने भी पार्वती के पास कथा पूरी की। तुलसीजी कथा को विराम देते लिखते हैं -

एहिं कलिकाल न साधन दूजा।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।

इस कलियुग में हम जैसे संसारी और क्या कर सकते हैं? राम को गाईए। राम का स्मरण कीजिए। राम के चरित्र का श्रवण कीजिए। नाम लेने से अजामिल, गणिका पार हुए हैं। तुलसी स्वयं को मतिमंद बताकर कहते हैं, आज परम विश्राम का अनुभव करता हूं।

बाप, इन चारों परम आचार्यों की कृपामयी छाया में बैठकर मेरी व्यासपीठ रामकथा गाती थी। मैं भी अब विराम देने जा रहा हूं। आप सबकी एकाग्रता और शिस्त की वंदना करता हूं। मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। राम का चरित्र, कृष्ण की लीला और हरि की कथा 'मानस-रामकृष्णहरि' की कथा है। राम परमार्थरूप है। कृष्ण पुरुषार्थरूप है। हरि प्रसन्नतारूप है। मैं प्रभु से प्रार्थना करूं कि आप सब खुश रहे। यह प्रेमयज्ञ निर्विघ्न पूरा होने जा रहा है। किसी की उपस्थिति का यह संकेत है कि कोई होता है!

कोई आया है जरूर और ठहरा भी है।
क्योंकि घर की दहलझ पे उजाला है बहुत।
-किशनबिहारी नूर

यह केवल परमात्मा की कृपा है। बाप, नौ दिनों की कथा का बहुत सुक्रित इकठ्ठा होता है। यह फल किसे अर्पित करे? सूर्य भी जिनकी एक आंख है, 'वन्दे सूर्य शशांकवह्निनयनं', यह महादेव शंकर है। तापी, सूर्यनगरी, सूर्यपुत्री के तट पर गाई गई यह सूर्यवंश की कथा मैं महाशिवरात्री के महादेव शंकर को अर्पण करता हूं।

कवचिदन्यतोऽपि

मूल, तना, डाल, पत्ते और बरोह ये बरगद के पांच गुणधर्म है

'संतोकबा मेडिकल सेन्टर' उद्‌घाटन कार्यक्रम में मोरारिबापू का मननीय वक्तव्य

'लालजीदादा का बरगद', और उसकी छत्रछाया में माँ संतोकबा मेडिकल सेन्टर 'सर्वजन सुरवाय, सर्वजन हिताय' रूप में यहां सद्‌प्रवृत्ति चल रही है। इस अवसर पर मुझे उनके दर्शन का और विशेष जानकारी लेने का अवसर मिला। आरंभ में मैं अपना आनंद व्यक्त करता हूं। आदरणीय गोविंदभाई धोलकिया, उनके पिताश्री लालजीदादा, उनके तीन भाई, मनजीभाई के चार भाई, उनके परिवारजन जो यहां उपस्थित है, उन सबका हृदयपूर्वक सादर अभिनंदन करता हूं। सात फरवरी से आरंभ हो रही सुरत की रामकथा का मंगलाचरण लाठी में हो रहा है। मैं कुछ कहूं इससे पूर्व मुझे दो चेतना को प्रणाम करना है। इस नगर का समर्थ राजवी, साहित्य जगत में शब्द और अक्षर का उपासक, छोटी-सी आयु में चल बसा, ऐसे कवि कलापी की चेतना को नमन करता हूं। दूसरी चेतना 'रामायण' जगत का एक दूसरा बरगद पूज्य भगवानदास शर्मा दादाजी, उन्होंने रामकथा का बहुत विस्तार किया। इन सबका स्मरण कर कुछ कहूं। 'रामचरित मानस' की एक चौपाई है -

मानस-मुशायरा

गालिब न कर हुजूरमें तू बार बार अरज,
जाहिर है तेरा हाल उनको कहे बगैर।
– गालिब

कोई आया है जरूर और ठहरा भी है।
क्योंकि घर की दहलझ पे उजाला है बहुत।
–किशनबिहारी नूर

इस शख्स से इतना ताल्लुक है 'फ़राज़',
वो परेशां हो तो हमे निंद नहीं आती।
– अहमद फ़राज़

ये मेरा शहर वफ़ा और में अकेला आदमी।
मेरे लाखों आशना और में अकेला आदमी।

●

एक ही सर है झुका सकता हूं किस किस के लिए,
अनगनित मेरे खुदा और मैं अकेला आदमी।
– कतील शिफाई

चरागों के बदले मकां जल रहे हैं।
नया है जमाना नयी रोशनी है।
– खुमार बाराबंकवी

कीरति भनिति भूति भलि सोई ।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई ।।

तुलसीदासजी ने तीन वस्तु लिखी। और ये न केवल इक्कीसवीं सदी में ही, बल्कि सनातन काल तक शाश्वत रहेगी। ऐसा मुझे 'रामायण'के गायक के रूप में विश्वास है। ये तीन वस्तु-एक तो कविता; दूसरी एश्वर्य; तीसरी कीर्ति। तीनों की सार्थकता तो ही है यदि वो गंगा के प्रवाह की तरह सबका कल्याण करती हो। जो कविता सरिता की तरह सबका कल्याण न कर सके वह सरिता नहीं, नाला है। जो एश्वर्य छोटे से छोटे आदमी का हित न कर सके ऐसा एश्वर्य विभूति नहीं, राख है; चूले की राख है। तीसरी परमात्मा की कृपा। भीतरी सद्भाव। बापदादा का पुण्य और की हुई कमाई से जो विभूति मिली हो उसके द्वारा प्राप्त हुई कीर्ति, प्रतिष्ठा सबका उपयोग न करे तो ऐसी कीर्ति दीर्घकाल तक नहीं टिक सकती।

बाप, गोविंदभाई ने पचास वर्ष तक दूधाला-सूरत की यात्रा की। एक बात स्पष्ट कर दूं, मैं यहां प्रशंसा करने नहीं आया हूं। पर एक साधु के रूप में मेरे हृदय में जो भाव जगे हैं; ऐसे सुंदर काम यह आदमी बरसों से कर रहा है। एक साधु के रूप में मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

गोविंदभाई, जिसके पास तीन वस्तु हो उसका जीवन ही कविता है। उनकी कमाई राख नहीं पर विभूति है। उनकी कीर्ति आकाश तक लहराती है। मुझे तीनों इनमें दिखाई देती है। इनमें व्यवस्था होती है। साहब, अस्पताल का उद्घाटन करने जाता हूं तब मुझे लगता है, पहले मुझे ही यहां दाखिल होना होगा! ऐसी भीड, कोई व्यवस्था न हो! तीन वस्तु मुझे दिखाई देती है। एक, व्यवस्था। मैं पहले भी सुरत गया हूं। गोविंदभाई के घर की रोटी खाई है। इस आदमी की व्यवस्था बहुत सुंदर है। इतनी सुंदर व्यवस्था! मैं अनेक अर्थ में व्यवस्था कहता हूं। यह तो सामान्य स्थूल बात कही कि इतनी शिस्तबद्ध, शांति। इस सुंदर व्यवस्था को मैं नमन करता हूं।

साहब, व्यवस्था तो कईयों के पास होती है। पर व्यवस्था के साथ जिनके पास एक अवस्था हो। अवस्था उम्र के संदर्भ में नहीं कहता। अवस्था माने आदमी की गंभीरता और परिपक्वता। शास्त्रों में चार प्रकार की अवस्थाएं बताई है। बाल्यावस्था, कुमारावस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था। चार अवस्थाएं है। वय के अनुसार निश्चित की गई अवस्थाएं हैं। मैं जो अवस्था कहता हूं उसमें प्रौढता-परिपक्वता और सब कुछ अपने पास होने पर भी स्थिरता है। बाप, इतना बड़ा बरगद फैला है, तो इनके पीछे एक प्रकारकी परिपक्वता तो होगी ही। मैं बरगद की व्याख्या देता हूं। मैंने दूधरेज में इस पर पूरी कथा कही है।

तो बाप, मुझे एक अवस्था दिख पड़ी। वर्ना साहब, प्रभु की इतनी कृपा होने के बाद स्थिर रहना बहुत कठिन है। उर्दू का एक शे'र है -

जिस जगह जाके इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पे जाना नहीं चाहिए।

जिस ऊंचाई पर से सामान्य आदमी छोटा लगे, ईश्वर ऐसी ऊंचाई न दे। ऊंचाई पर पहुंचे लोग नीचे खड़े आदमी को छोटा मानते हैं पर उस छोटे को हम भी छोटे दिखाई देते हैं! यह कब होता है? जब प्रभु कृपा और वशिष्ठजनों की कृपा से एक अवस्था का निर्माण होता है। एक साधु के रूप में ऐसी अवस्था को देखकर प्रसन्न होता हूं। परमात्मा करे यह अवस्था बरकरार रहे। नहीं तो आदमी गलत मोड पे चला जाय! उम्र और समझदारी की अवस्था होती है। तुलसीदास ने लिखा है -

सौरज धीरज तेहि रथ चाका ।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका ।।

'रामायण' के 'लंकाकांड' में धर्मरथ का वर्णन करते उन्होंने कहा कि शौर्य और धीरज यह जीवनरथ के दो पहिए हैं। आदमी निकम्मा है यदि शौर्य और धीरज न हो। मुझे धैर्य-परिपक्वता पसंद है। ये दोनों हो पर परमतत्त्व पर आस्था न हो तो? जिसकी जिस पर आस्था हो उसे वह मुबारक। पर किसी परमतत्त्व पर आस्था होनी चाहिए। गोविंदभाई श्लोक बोलते है तो शुद्ध बोलते हैं। यहां आया तब चौपाईयों का गान चलता था। ऐसे आदमी के पास आस्था की पुंजी होती है। साहब, आस्था न हो तो क्या किया जाय? आस्था माने अंधश्रद्धा नहीं, जादू-टोना चमत्कार नहीं। आस्था माने परम जागृति। आस्था माने जो श्रद्धा है। 'रामचरित मानस' ने इसे साक्षात् जगदंबारूप कहा है। 'भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।' लालजीदादा के परिवार में तीनों का संगम हुआ है, इसका मुझे आनंद है। दूसरी कोई वजह नहीं है, पर 'रत आवे ने न बोलिए तो हैया फाट मरां।' ऐसा कोई सत्कर्म करता हो और प्रसन्न न हो तो साधुत्व लज्जित होता है।

तीनों का संगम हुआ है। त्रिवेणी संगम प्रयाग है। इसमें तो गंगा-यमुना दिखती है। पर सरस्वती का प्रवाह गुप्त है। लालजीदादा के परिवार में सरस्वती प्रकट हुई। नहीं तो शिक्षकों का द्विदिवसीय संमेलन करने की गोविंदभाई को क्या जरूरत थी? मुझे ऐसा लगता है कि लाठी में सरस्वती प्रकट है। ये तीनों प्रवाह एकत्र है। यह एक जीवंत त्रिवेणी है। तो बाप, ऐसे एक सत्कर्म के लिए मेरा आनंद व्यक्त करने आया हूं।

बरगद की पांच वस्तु-मूल, तना, डालियां, पत्ते, फल तो होते ही है। बडबट्टा। पर वह कोई आम नहीं है। इसलिए बरगद फल की आकांक्षा नहीं रखता। एक भी बडबट्टा तोड़ना नहीं है, पंछियों के लिए रखने हैं। पंछी आते हैं और खाते हैं। सिर्फ खाने आते हैं ऐसा नहीं है। यहां इलाज लेने आयेंगे, शिक्षण लेने आयेंगे। बेटियों के ब्याह की योजना है। ऐसे सत्कर्म कर रहे हैं। तो चोंचवाले और पंखवाले आयेंगे। उनका भी आभार मानना होगा, क्योंकि पंछी बडबट्टा में चोंच मारते हैं तब उसके बीज नीचे गिरते हैं तो उसमें से दूसरे बरगद उत्पन्न होते है। यहां जो दर्दी आयेंगे वे ऐसे सुंदर आशीर्वाद के बीज देकर जायेंगे कि लालजीबापा के बरगद में फिर अनेक बरोह फूटेगी।

तो, बरगद पांच हिस्सों में बंटा हुआ है-मूल, तना, डालियां, पत्ते और नयी प्रस्फुटित बरोह। मैं बडबट्टे को नहीं गिनता। बरगद वेदकालीन वृक्ष है। भगवान शंकर के कैलास पर सूक्ष्म बरगद है जो दिखाई नहीं देता। पर शास्त्र और आस्था यों कहते हैं कि वहां बरगद है। भगवान शंकर वहां बरगद के नीचे कथा करते हैं। पीपल विष्णु का स्वरूप है। पितृ का स्वरूप है। परंतु बरगद शिवस्वरूप है, कल्याण स्वरूप है।

याज्ञवल्क्य-भरद्वाज का संवाद तीर्थराज में हुआ। वहां अक्षयवट बरगद के नीचे कथा गायन किया है। कागभुशुंडिजी ने नीलगिरिपर्वत पर कथा की वहां पांच वृक्ष है। उसके नीचे वे अलग-अलग साधना करते हैं। पर बरगद के नीचे वे स्वयं कथा करते हैं। तुलसीदासजी ने जिसके नीचे कथा की है वह चाहे स्थूल न हो तो भी विश्वास का बरगद है।

बटु बिस्वास अचल निज धरमा ।

●

सिव बिश्राम बिटप श्रुति गाया ।

तो बाप, बरगद की पहली वस्तु उसका मूल, माने विश्वास। डालियां हिले, पत्ते हिले, बडबट्टे भी गिरे पर साहब, मूल न हिले। 'मेरु रे डगे पण जेनां मनडां न डगे।' विश्वास बरगद का मूल है। लालजीदादा के बरगद के मूल में कहीं विश्वास पड़ा है। अत: यह बरगद सलामत है। तना; मूल अंदर गति करे जहां पानी हो। इसी तरह विश्वास उसे कहते हैं भले तिलक न करे पर अंदर से अपने विश्वास के मूल जहां पानी तत्त्व है उसकी ओर गति करे वही उसका मूल है। मूल हिलता नहीं पर गति तो करता ही है। तना मोटा हो, ऊपर भी जाय पर तना डिगता नहीं। बरगद का तना बढ़ता है। तना माने क्या? आप जो सत्कर्म करते हैं उसमें आपके संतान 'हमारे दादा करते हैं वह ठीक ही करते हैं।' ऐसे उनके हृदय का सुर मिले तो समझना कि हमारा तना आगे बढ़ता है। नहीं तो परिवार को पसंद न आये तो? जो तना काटे उसे वह गोंद देता है। इसका गोंद पाक बने। और इससे प्रसूता माँ-बेटी खुश रहे। उस समय हमारे पास फेविकोल-बेविकोल नहीं था तब यह गोंद ही काम में आता था। उसमें से सत्यतत्त्व गोंद निकलता है। केवल मोटा होना और ऊपर बढ़ना ऐसा नहीं पर उसमें से गोंदतत्त्व निकलना चाहिए। यह तने की दोहाई है। रसमय है।

फिर डालियां; बरगद की डालियां। लाठी में आफिस हो, सुरत में आफिस हो। ये सभी डालियां है। उन डालियों को खबर होनी चाहिए कि हम तने के साथ जुड़ी हुई है। यदि डाल कट जाय तो वह विभूति नहीं रहती, विभक्ति रहती है। बरगद का तना और डालियां फैले तभी तो दूसरों को विश्राम दिया जा सकता है। परिवार उसकी शाखाएं हैं। चौथा, पत्ते। 'वटस्य पत्रस्य पुटे शयानं बालं मुकुंदं मनसा स्मरामि।' जो पत्ते में परमात्मा को झुलने की इच्छा हो ऐसे पत्ते जिसमें हरि हो, हरिपना हो। हरि के दो अर्थ है। हरि माने हरित। तुलसीदासजी 'किष्किन्धाकांड' में 'हरि' शब्द का प्रयोग करते हैं। हरित माने हरी-भरी धरती। पत्ते हरे-भरे हो। हरा-भरा रहने का अर्थ है, हमारी आंखों में एकदम हरियाली छा जाय कि वाह, अभी और आगे बढ़। धंधे में स्पर्धा क्या कम होती है? पर जिस स्पर्धा में श्रद्धा की हरी-भरी भावना हो कि हृदय में सोया कृष्ण प्रसन्न हो जाय। ये सब उसके पत्ते हैं। पत्तों को हिलना उसकी मुस्कुराहट है। हंसना है। संगीत है। ऊंचाई मिलने पर मुंह फूलाकर न बैठे वही हरे पत्ते हैं। मैं साधु के रूप में कहूं कि उन्नति मिलने के बाद भी दूसरों की उन्नति देखकर खुश होंगे उन्हें नये-नये प्रवाह फूटेंगे। फल की आशा नहीं है। लोग इलाज के लिए आयेंगे। यह फल नहीं तो क्या है? बहुत ही जरूरी है कि नई-नई बरोह फूटे; नये-नये परमार्थ के भाव जगे। ये सभी बरोह है। ऐसा कबीर बरगद, अक्षयवट और कलकत्ता में रवीन्द्रनाथ टागोर का बनियन ट्री है।

मेरी दृष्टि से बरगद के यह पांच गुणधर्म है। 'लालजीदादा का बरगद' शब्द मुझे पसंद आया। ऐसे अनेक बरगद की घनी छांह में आखिरी आदमी के इलाज के लिए केन्द्र नवसंस्करण में खुला है। यह जो पूरी प्रक्रिया शुरू हुई है इसके प्रति मेरी प्रसन्नता व्यक्त करने आया हूं। आपकी श्रद्धा को वंदन करता हूं। अंत में उर्दू के शे'र से समापन करुं-

खुदा करे तेरा दामन गुलों से भर जाए ।

('संतोकबा मेडिकल सेन्टर' उद्घाटन अवसर पर लाठी (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक - ०९-१०-२०१४)

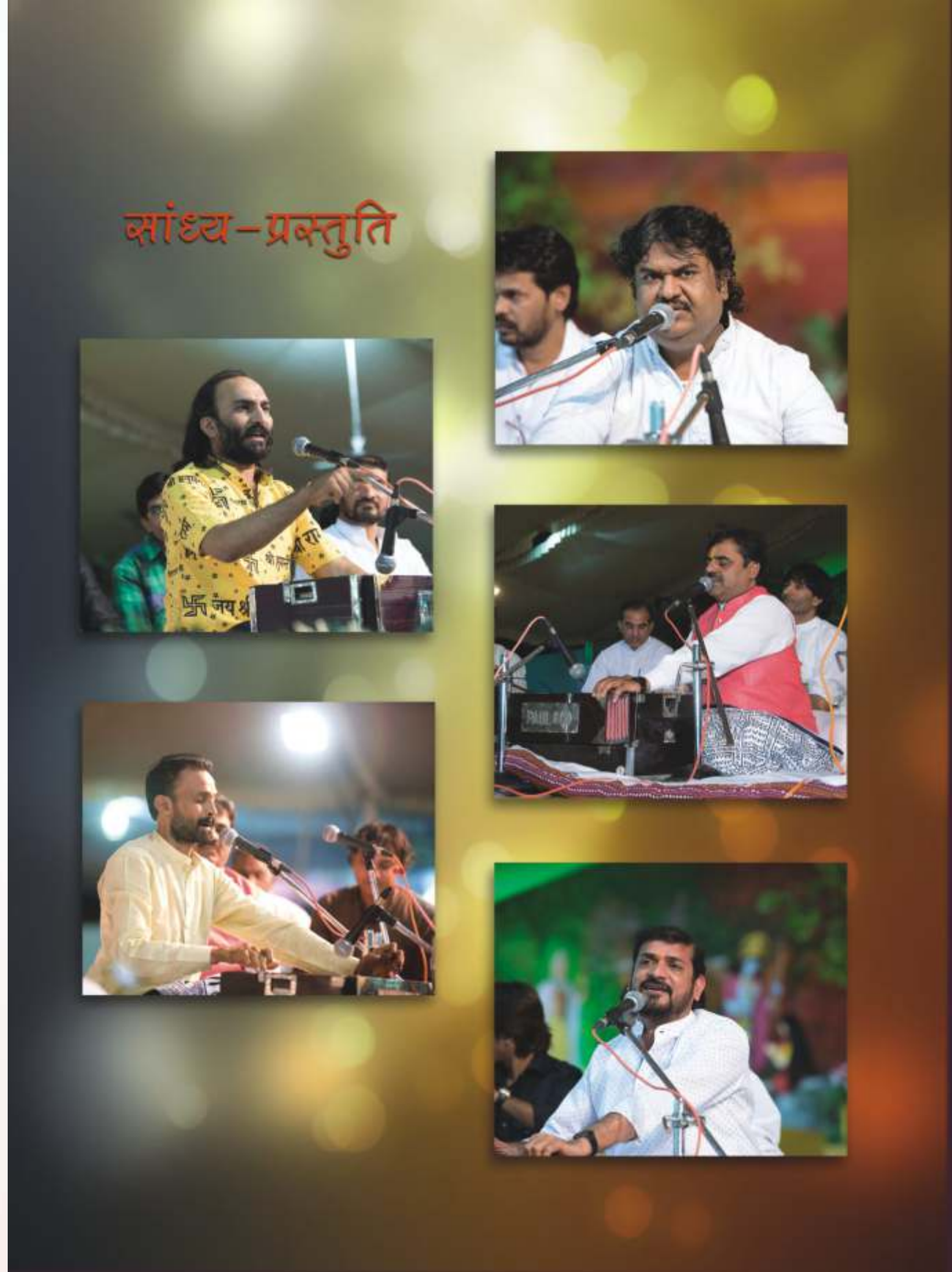

राम यानी ब्रह्म; ब्रह्म यानी राम। राम यानी परमारथ; परमारथ यानी राम। अब 'अबिगत।' जिसका ब्यौरा न दे सके उसका नाम राम। किसी अगमतत्त्व की ओर यहां संकेत है। हम चाहे लाख कोशिश करे पर ब्यौरा नहीं दे सकते ऐसे अमुक रहस्यमय तत्त्व जगत में है। ये सभी रामतत्त्व है। जग में जिसका पूरा ब्यौरा दे न सको उसका नाम 'राम' है।

•

मुझे तीन कोण से कृष्ण देखने हैं। एक कृष्ण की रामलीला। है कृष्ण, पर उनकी लीला को मैं नाम देता हूं रामलीला। 'रामलीला' शब्द इसलिए प्रयुक्त करता हूं कि वह कृष्ण ने बलराम के साथ की हुई लीला है। दूसरी कृष्ण की रासलीला। रास-लीला अद्‌भुत है! यह प्रेमलीला है। कृष्ण की रासलीला यह प्रेम की पराकाष्टा है। और तीसरी कृष्ण की राजलीला। कृष्ण की राजलीला ज्यादा से ज्यादा प्रकाशित हुई है 'महाभारत' में।

•

'हरि' व्यापकता का पर्याय है। मैं आप के विचारों को व्यापक दृष्टि से देखूं तो मेरे लिए आप हरि है। दूसरा, हरि यानी जो अनंत है। और 'हरि' शब्द का एक तीसरा अर्थ, जो अवतार लेते है उनको हरि कहते हैं।

– मोरारिबापू

॥ जय सीयाराम ॥